कुंडलिनी शक्ति ही अंधेरे से संपूर्ण सृष्टि की रचना करती है
क्वांटम विज्ञान व
अंतरिक्ष विज्ञान
में योग
विज्ञानांत से योगारम्भ की ओर बढ़ते कदम
प्रेमयोगी वज्र

क्वांटम विज्ञान व अंतरिक्ष विज्ञान में योग

विज्ञानांत से योगारम्भ की ओर बढ़ते कदम

प्रेमयोगी वज्र

2023

पुस्तक परिचय

प्रिय पाठको, आज का समय विज्ञान के चरमोत्कर्ष का समय है। वैज्ञानिकों के अथक परिश्रम की बदौलत दुनिया ने क्वांटम विज्ञान व अन्तरिक्ष विज्ञान की तथाकथित अबूझ समझी जाने वाली बहुत सी पहेलियों को सुलझा दिया है। पर अब विज्ञान की सुई ब्लैकहोल, डार्क मैटर व डार्क एनेर्जी जैसे अदृश्य तत्त्वों में अटक गई है। ऐसा लगता है कि ये अदृश्य चीजें योग और अध्यात्म से जुड़ी हुई हैं। वैसे भी अगर विज्ञान को इनके स्वरूप के बारे में अप्रत्यक्ष अंदाजा भी लग गया, तो भी ये अनुभव से ही पूरी तरह से जाने जा सकते हैं। जब ऐसे सूक्ष्म तत्त्व भी अनुभव किए बिना सिद्ध नहीं किए जा सकते, तब भला परमात्मा, जो सबसे परे और सबसे सूक्ष्म है, उसे कैसे बिना अनुभव के जाना जा सकता है। बेशक अंदाजा तो विज्ञान भी कभी परमात्मा का लगा ही लेगा, पर उसकी सिद्धि तो अनुभव से ही होगी न। योग ऐसे ही सूक्ष्म अनुभव कराता है। संभवतः इसीलिए आजकल दुनिया में, यहाँ तक की विज्ञानियों के बीच भी योग के प्रति दीवानगी बढ़ती ही जा रही है। प्रस्तुत पुस्तिका में यही दिखाया गया है कि कैसे क्वांटम विज्ञान और अन्तरिक्ष विज्ञान योग में विलीन होते जा रहे हैं। मैंने ब्लैकहोल्स पर एक अलग पुस्तक भी लिखी है, जैसा कि इस पुस्तक के अंत में सूचीबद्ध है। आशा है कि यह आपकी अपेक्षा पर खरा उतरेगी।

लेखक परिचय

प्रेमयोगी वज्र का जन्म वर्ष 1975 में भारत के हिमाचल प्रान्त की एक सुन्दर व कटोरानुमा घाटी में बसे एक छोटे से गाँव में हुआ था। वह स्वाभाविक रूप से लेखन, दर्शन, आध्यात्मिकता, योग, लोक-व्यवहार, व्यावहारिक विज्ञान और पर्यटन के शौक़ीन हैं। उन्होंने पशुपालन व पशु चिकित्सा के क्षेत्र में भी प्रशंसनीय काम किया है। वह पोलीहाऊस खेती, जैविक खेती, वैज्ञानिक और पानी की बचत युक्त सिंचाई, वर्षाजल संग्रहण, किचन गार्डनिंग, गाय पालन, वर्मीकम्पोस्टिंग, वैबसाईट डिवेलपमेंट, स्वयंप्रकाशन, संगीत (विशेषतः बांसुरी वादन) और गायन के भी शौक़ीन हैं। लगभग इन सभी विषयों पर उन्होंने दस के करीब पुस्तकें भी लिखी हैं, जिनका वर्णन एमाजोन ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट demystifyingkundalini.com पर भी उपलब्ध है। वे थोड़े समय के लिए एक वैदिक पुजारी भी रहे थे, जब वे लोगों के घरों में अपने वैदिक पुरोहित दादा जी की सहायता से धार्मिक अनुष्ठान किया करते थे। उन्हें कुछ उन्नत आध्यात्मिक अनुभव (आत्मज्ञान और कुण्डलिनी जागरण) प्राप्त हुए हैं। उनके अनोखे अनुभवों सहित उनकी आत्मकथा विशेष रूप से “शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)” पुस्तक में साझा की गई है। यह पुस्तक उनके जीवन की सबसे प्रमुख और महत्त्वाकांक्षी पुस्तक है। इस पुस्तक में उनके जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण 25 सालों का जीवन दर्शन समाया हुआ है। इस पुस्तक के लिए उन्होंने बहुत मेहनत की है। एमाजोन डॉट इन पर एक गुणवत्तापूर्ण व निष्पक्षतापूर्ण समीक्षा में इस पुस्तक को पांच सितारा, सर्वश्रेष्ठ, सबके द्वारा अवश्य पढ़ी जाने योग्य व अति उत्तम (एक्सेलेंट) पुस्तक के रूप में समीक्षित किया गया है। गूगल प्ले बुक की समीक्षा में भी इस पुस्तक को फाईव स्टार मिले थे, और इस पुस्तक को अच्छा (कूल) व गुणवत्तापूर्ण आंका गया था। इस पुस्तक का अंग्रेजी में मिलान "Love story of a Yogi- what Patanjali says" पुस्तक है। प्रेमयोगी वज्र एक रहस्यमयी व्यक्ति है। वह एक बहुरूपिए की तरह है, जिसका अपना कोई निर्धारित रूप नहीं होता। उसका

वास्तविक रूप उसके मन में लग रही समाधि के आकार-प्रकार पर निर्भर करता है, बाहर से वह चाहे कैसा भी दिखे। वह आत्मज्ञानी (एनलाईटनड) भी है, और उसकी कुण्डलिनी भी जागृत हो चुकी है। उसे आत्मज्ञान की अनुभूति प्राकृतिक रूप से / प्रेमयोग से हुई थी, और कुण्डलिनी जागरण की अनुभूति कृत्रिम रूप से / कुण्डलिनी योग से हुई। प्राकृतिक समाधि के समय उसे सांकेतिक व समवाही तंत्रयोग की सहायता मिली, जबकि कृत्रिम समाधि के समय पूर्ण व विषमवाही तंत्रयोग की सहायता उसे उसके अपने प्रयासों के अधिकाँश योगदान से प्राप्त हुई।

अधिक जानकारी के लिए, कृपया निम्नांकित स्थान पर देखें-

https://demystifyingkundalini.com/

वैधानिक टिप्पणी (लीगल डिस्क्लेमर)

इस अध्यात्मविज्ञान सम्बंधित पुस्तिका को किसी पूर्वनिर्मित साहित्यिक रचना की नक़ल करके नहीं बनाया गया है। फिर भी यदि यह किसी पूर्वनिर्मित रचना से समानता रखती है, तो यह केवल मात्र एक संयोग ही है। इसे किसी भी दूसरी धारणाओं को ठेस पहुंचाने के लिए नहीं बनाया गया है। पाठक इसको पढ़ने से उत्पन्न ऐसी-वैसी परिस्थिति के लिए स्वयं जिम्मेदार होंगे। हम वकील नहीं हैं। यह पुस्तक व इसमें लिखी गई जानकारियाँ केवल शिक्षा के प्रचार के नाते प्रदान की गई हैं, और आपके न्यायिक सलाहकार द्वारा प्रदत्त किसी भी वैधानिक सलाह का स्थान नहीं ले सकतीं। छपाई के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इस पुस्तक में दी गई सभी जानकारियाँ सही हों व पाठकों के लिए उपयोगी हों, फिर भी यह बहुत गहरा प्रयास नहीं है। इसलिए इससे किसी प्रकार की हानि होने पर पुस्तक-प्रस्तुतिकर्ता अपनी जिम्मेदारी व जवाबदेही को पूर्णतया अस्वीकार करते हैं। पाठकगण अपनी पसंद, काम व उनके परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। उन्हें इससे सम्बंधित किसी प्रकार का संदेह होने पर अपने न्यायिक-सलाहकार से संपर्क करना चाहिए।

अध्याय-1

कुण्डलिनी योगी एक सच्चे क्वांटम वैज्ञानिक जैसा होता है, जो सूक्ष्म भौतिक दुनिया का मास्टर होता है

कुण्डलिनी योग ही आदमी की सीखने की और आगे बढ़ने की जिज्ञासा को पूरा कर सकता है

दोस्तों, आओ, **आत्मा की अंतरिक्ष-रूपता** के बारे में बात करते हैं। व्यवहार में देखने में आता है कि हरेक चीज नीचे से नीचे टूटती रहती है। अंत में सबसे छोटी चीज भी बनेगी जो नहीं टूटेगी। वह आकाश ही है। फिर सृष्टि के आरम्भ में पुनः जब इससे चीज बननी शुरु होएगी और पहली चीज बनेगी वह आकाश में **आभासी तरंग** ही होगी क्योंकि **आकाश** के इलावा कुछ भी नहीं था। इसके लिए एक ही तरीका है कि **रनिंग या स्टेंडिंग वेव** बना कर तरंग या कण जैसा दिखा दिया जाए। वैसे भी तरंग को कण के रूप में दिखा सकते हैं, कण को तरंग के रूप में नहीं। इससे भी सिद्ध होता है कि जगत का तरंग रूप ही सत्य है, कण या भौतिक रूप कल्पित व अवास्तविक है, जैसा शास्त्रों में हर जगह कहा गया है। जब मीडियम और पार्टिकल एक ही चीज हो और कण मीडियम के इलावा अन्य कुछ न हो तो पार्टिकल को भी वेव ही बोलेगे। हवा के अंदर पानी का कण बन सकता है, पर पानी के अंदर पानी का कण कैसे बन सकता है। एक ही तरीका है कि आभासी रनिंग या स्टेंडिंग वेव बना कर कण जैसा दिखा दिया जाए। इसलिए शास्त्रों में उस **चिदाकाश** अर्थात **चेतन आकाश** को **नेति-नेति** कह कर पुकारा गया है। नेति शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है, न और इति। न का मतलब नहीं, और इति का मतलब यह है। इसलिए नेति का मतलब हुआ, यह नहीं,

मतलब यह **परमात्मा** नहीं है। जो भी दिखेगा, वह नेति ही माना जाएगा। सभी **मूलकणों** को भी नेति ही माना जाएगा, जब तक जो भी मिलते जाएंगे। अंत में जो अदृष्य जैसा काला आसमान बचेगा, वह भी नेति ही होगा। वह इसलिए क्योंकि उसे भी हम अन्य रूप में देख पा रहे हैं या जान पा रहे हैं। यदि काला या अचेतन आसमान अपने आप के रूप में अनुभव हो तो यह आत्मा नहीं है, क्योंकि अँधेरे आसमान में प्रकाशमान जगतरूपी तरंगें पैदा नहीं हो सकतीं। तरंग और तरंग का आधार एकदूसरे से अलग नहीं हो सकते जैसे तरंग सागर से अलग नहीं। इसलिए वही अपनी आत्मा का असली अनुभव हैं, जिसमें जगतरूपी विचार, दृश्य आदि तरंग की तरह अपृथक दिखें। किसी भी तरह का कोई भी विचार या भाव नेति ही माना जाएगा। अंत में ऐसा तत्त्व बचेगा, जिसकी तरफ हम इशारा नहीं कर पाएंगे, मतलब वह हमारा अपना आत्मरूप होएगा। क्योंकि हम उसे इति अर्थात यह कहकर सम्बोधित नहीं कर पाएंगे, इसलिए वह नेति भी नहीं हो सकता। नेति वही हो सकता है, जिसे हम इति कह पाते हैं। यह **कुण्डलिनी जागरण** के दौरान अनुभव होता है। अर्थात एक मानसिक अनुभूति में स्थित प्रकाश और चेतना उसके अनंत सागर के भीतर एक छोटी सी लहर है, असंबद्ध आधार माध्यम के अंदर एक कण के रूप में नहीं, भौतिक प्रयोगों और जागृति के अनुभवों के अनुसार। दोनों इसको पूरी तरह से साबित करने के लिए कंधे से कंधा मिलाकर चलते हैं। हालांकि अधिक दार्शनिकों और बुद्धिजीवियों के लिए जागृति का आंतरिक अनुभव ही काफी है। इससे बड़ा क्या प्रमाण होगा परमात्मा के बारे में। इसीलिए कहते हैं कि मौन ही ब्रह्म है। अधिकांश वैज्ञानिक व आधुनिकतावादी जो सोचते हैं कि फलां कण मिलेगा या फलां बल का पता चलेगा या फलां थ्योरी सिद्ध होएगी तो सम्भवतः ब्रह्माण्ड के सभी रहस्यों से पर्दा उठ जाएगा। पर ऐसा सच नहीं है। जो भी मिलेगा वह इति ही होगा, इसलिए नेति के दायरे में आएगा। कुछ न कुछ हमेशा बचा रहेगा ढूंढने को। मतलब सृष्टि के मूल का पता नहीं चलेगा। परम मूल मतलब परम आत्मा का पता तभी चलेगा जब कोई इति अर्थात अपने से अलग चीज न मिलकर अपना आत्म रूप महसूस होएगा। यह कुण्डलिनी

योग से ही संभव है। इससे सिद्ध होता है कि कुण्डलिनी योग से ही सृष्टि के सभी **रहस्यों** से पर्दा उठ सकता है और वही आदमी की सीखने की और आगे बढ़ने की जिज्ञासा को पूरा कर सकता है। वही एक लम्बे अरसे की मानसिक प्यास बुझा सकता है।

जितने जीव उतने यूनिवर्स मतलब मल्टीवर्स

ब्रह्माण्ड तो चिदाकाश के अंदर विकाररहित तरंग की तरह है। यह बिल्कुल शुद्ध है **ब्रह्म** की तरह। जल और जलतरंग के बीच क्या अंतर हो सकता है। पर आदमी अपनी भावनाओं, मान्यताओं, व विचारों के साथ इसे रंग देता है। इसलिए यह ब्रह्माण्ड हरेक आदमी या जीव के लिए अलग है। इसीलिए कहते हैं कि सृष्टि बाहर कहीं नहीं, यह सिर्फ आदमी के मन की उपज है। यह बात पूरे **योगवासिष्ठ** ग्रंथ में अनेकों कहानियों और उदाहरणों से स्पष्ट की गई है। इसे ही हम मल्टीवर्स भी कह सकते हैं। कुण्डलिनी योग से जब मन की सोच व भावनाएँ शुद्ध होने से मन की चंचलता का शोर शांत हो जाता है, मतलब उनके प्रति आसक्ति नष्ट हो जाती है, तभी असली माने ओरिजिनल ब्रह्मरूपी ब्रह्माण्ड का अनुभव होता है, जिससे आदमी **आत्मसंतुष्ट** सा रहने लगता है । कुण्डलिनी ही अद्वैत है। **अद्वैत** ही जगत की सभी चीजों को एक जैसा व आत्म-आकाश में तरंग की तरह देखना है। क्वांटम वैज्ञानिक भी सूक्ष्म पदार्थों को इसी तरह अंतरिक्ष से अभिन्न, तरंगरूप व एकरूप देखता है। इलेक्ट्रोन तरंग और फोटोन तरंग अर्थात प्रकाश तरंग एक जैसी ही हैं। कण रूप में ही दोनों अलग-अलग दिखते हैं। मतलब कि तरंग-दृष्टि ही सत्य व अद्वैतपूर्ण है, जबकि कण-दृष्टि ही असत्य व द्वैतपूर्ण है। स्थूल जगत में भी सत्य दृष्टि यही तरंगदृष्टि है, क्योंकि सूक्ष्म पदार्थ ही आपस में जुड़कर स्थूल जगत का निर्माण करते हैं। कण वाली **द्वैतपूर्ण** दृष्टि मिथ्या, भ्रम से भरी, दुनिया में भटकाने वाली व दुःख देने वाली है, और यह आसक्ति के साथ दुनिया को देखने से पैदा होती है। **यह ऐसे ही है जैसे अगर डबल स्लिट एक्सपेरिमेंट** में **मूलकणों** को देखने की कोशिश करें, तो वे कण की

तरह व्यवहार करते हैं, अन्यथा अपने असली तरंग के रूप में होते हैं। डबल मजा लेना हो तो डबल स्लिट के पास खड़े होकर कभी उसे तिरछी नजर से तनिक देख लो और कभी शर्मा कर मुंह फेर लो। हहा।

एक ही स्थान पर अनगिनत ब्रह्मान्डों मतलब पैरालेल यूनिवर्स का अस्तित्व

अनगिनत आयामों का अस्तित्व

क्योंकि भौतिक संसार अंतरिक्ष के अंदर एक आभासी तरंग है, इसलिए एक ही स्थान पर अनगिनत किस्म की आभासी तरंगें बन सकती हैं। हो सकता है कि एक किस्म की तरंग दूसरे किस्म की तरंग से बिल्कुल भी प्रतिक्रिया न करे। फिर तो एक ही स्थान पर एकसाथ अनगिनत स्वतंत्र ब्रह्माण्ड स्थित हो सकते हैं। इससे हो सकता है कि जहाँ मैं इस समय बैठा हूँ, बिल्कुल वहीं पर मतलब मेरे द्वारा घेरे हुए स्थान में ही ब्रह्माण्ड की सभी चीजें और ब्रह्माण्ड के सभी क्रियाकलाप मौजूद हों, क्योंकि किसी आयाम के ब्रह्माण्ड में कुछ होगा, तो किसी में कुछ, इस तरह अनगिनत ब्रह्मान्डों में सबकुछ कवर हो जाएगा। ऐसा भी हो सकता है कि इसी स्थान पर भरेपूरे अनगिनत ब्रह्माण्ड मौजूद हों, क्योंकि छोटा-बड़ा भी सापेक्ष ही होता है, वास्तविक नहीं। इसका मतलब है कि इस तरह से **असंख्य आयामों का अस्तित्व** है। उन्हें हम कभी जान ही नहीं सकते, क्योंकि जिस आभासी तरंग के आयाम में हमारा ब्रह्माण्ड स्थित है, वह दूसरे किस्म की आभासी तरंगों से निर्मित आयामों से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होगा। हो सकता है कि जो **ग्रेट अट्रेक्टर** माने **महान आकर्षक** बल ब्रह्माण्ड को गुब्बारे की तरह फुला रहा है, वह अज्ञात आयामों वाले अनगिनत व भारीभरकम ब्रह्मान्डों के रूप में हों। हम उसे अंतरिक्ष की इन्हेरेंट माने स्वाभाविक **गुरुत्वाकर्षण शक्ति** मान रहे हों, जबकि वह अदृष्य ब्रह्मान्डों से निर्मित हो रही हो।

पदार्थ के ड्यूल नेचर होने का व्यक्तिगत अनुभव रूपी वैज्ञानिक प्रयोग

एकबार मेरे हाथ पर **आसमानी बिजली** गिरने की एक चिंगारी टकराई थी। मुझे ऐसे महसूस हुआ कि किसी ने जोर से एक पत्थर मेरे हाथ की पिछली सतह पर मारा हो। यहाँ तक कि मैं इधरउधर देखने लगा कि किसने पत्थर मारा था। वह बिजली का चक्र लगभग दस मीटर दूर एक लोहे की चद्दर पर गिरा था जिसके आसपास बच्चे भी खेल रहे थे पर वे सौभाग्यवश सुरक्षित बच गए। अद्भुत बात कि उस लोहे की चद्दर पर खरोच तक नहीं आई थी, वह बिल्कुल पहले की तरह थी। कोई चीज वगैरह टकराने की भी कोई आवाज नहीं हुई। इसका मतलब है कि पदार्थ के **मूल कण इलेक्ट्रोन** ने मेरे हाथ पर कण की तरह व्यवहार किया, जबकि उसीने लोहे की चद्दर के ऊपर तरंग के रूप में व्यवहार किया। **फोटोइलेक्ट्रीक इफेक्ट व डबल स्लिट एक्सपेरिमेंट** तो बेजान पदार्थों वाला प्रयोग था, पर यह प्रयोग मैंने अपने जिन्दा शरीर के ऊपर महसूस किया। आपने भी देखा होगा कि कैसे आसमानी बिजली गिरने से पूरी इमारत धराशायी हो जाती है, या उसके छत पर बड़ा सा छेद हो जाता है, ऊँचे पेड़ की काफी लकड़ी बीच में से छिल जाती है, या पूरा पेड़ बीच में से टूट कर दो हिस्सों में बंट जाता है। इसे **संस्कृत** में **वज्रपात** कहते हैं, मतलब एक लोहे के जैसे गोले का आसमान से गिरना, जैसे कोई **बम** गिरता है। इसका मतलब है कि पुराने समय के लोगों को **इलेक्ट्रोन-तरंग** के **कण-प्रभाव** का ज्ञान था। **हिमाचल प्रदेश** के **कुल्लू**में एक **बिजली महादेव मंदिर** है। इसमें स्थित पत्थर के **शिवलिंग** पर हर साल एकबार **बिजली** गिरती है, जिससे यह दो टुकड़ों में बंट जाता है। फिर उन दोनों टुकड़ों को मंदिर के पुजारियों के द्वारा मक्खन से जोड़ दिया जाता है। यह भी तो इलेक्ट्रोन का कण-रूप ही है। मूलकण इतना **सूक्ष्म** होता है कि **लार्ज हैडरोन कोलायडर** में उसका अंदाजा अप्रत्यक्ष रूप से उसके टकराने से हुए प्रभाव को मापकर लगाया जाता है, वैसे ही जैसे

मेरे हाथ पर उसने टकराने की **संवेदना** पैदा की, प्रत्यक्ष रूप से तो उसे कभी नहीं जाना जा सकता, देखा जाना तो दूर की बात है।

अध्याय-2

कुण्डलिनी योग से ही सृष्टि के मूलकण, मूल तरंग व प्लेन्क लेंथ जैसे क्वांटम तत्त्व बनते हैं

मन के अंदर और बाहर दोनों एकदूसरे के सापेक्ष और मिथ्या हैं

मन के बाहर किसी भी चीज या जगत का अस्तित्व सिद्ध नहीं किया जा सकता

दोस्तों, जगत सत्य नहीं, बल्कि **आत्माकाश** के अंदर एक **आभासी तरंग** है। इसी तरह, स्थूल जगत का भी कोई अस्तित्व नहीं है, इसकी रचना भी मन ने की है। यह कोई आज की खोज नहीं है, जैसा कि कई जगह दिखावा हो रहा है। यह **ऋषिमुनियों** और अन्य अनेकों जागृत व्यक्तियों ने हजारों साल पहले अनुभव कर लिया था, जो उन्होंने आगे आने वाली हमारी जैसी पीढ़ियों के फायदे के लिए **अध्यात्म शास्त्रों** में लिखकर छोड़ा। विशेषकर **योगवासिष्ठ** ग्रंथ में इन तथ्यों का बड़ा सुंदर और वैज्ञानिक जैसा वर्णन है। कभी उसका इतना आकर्षण होता था कि उसको शांति से पढ़ने के लिए या उसे पढ़कर कई लोग घरबार छोड़कर ज्ञानप्राप्ति के लिए निर्जन आश्रम में चले जाते थे। यह पाठक को **क्वांटम** या **पारलौकिक** जैसे आयाम में स्थापित कर देता है। इसमें **पूनरुक्तियां** बहुत ज्यादा हैं, इसलिए बारबार एक ही चीज को विभिन्न आकर्षक तरीकों से दोहराकर यह **माइंडवाश** जैसा कर देता है। कट्टर भौतिकवादी कह सकते हैं कि जागृति से अनुभव हुए आत्माकाश के अंदर मानसिक सूक्ष्म जगत के बारे में तो यह बात सही है, पर बाहर के स्थूल भौतिक जगत के बारे में यह कैसे मान लें। पर वे उसी

पल यह बात भूल जाते हैं कि मन के इलावा स्थूल जगत जैसी चीज का कोई अस्तित्व ही नहीं है, क्योंकि मन के इलावा आदमी कुछ नहीं जान सकता। सिर्फ उस जगत की एक कल्पना कर सकते हैं, पर वह काल्पनिक जगत भी तो सूक्ष्म ही है। फिर कुछ तर्क जिज्ञासु लोग यह कल्पना कर सकते हैं कि **चेतन आकाश** को ही मूल क्यों समझा जाए, **जड़ आकाश** को क्यों नहीं, क्योंकि दुःख अभाव आदि जड़ आकाश के टुकड़े हैं।

अचेतन आकाश भी चेतन आत्माकाश में जगत की तरह आभासी व मिथ्या है

इसका जवाब जागृत लोग इस तरह से देते हैं कि **चिदाकाश-लहर** की तरह ही अचेतन आकाश का अस्तित्व भी नहीं है। वह भ्रम से अपनी आत्मा के रूप में महसूस होता है। वह भ्रम जगत के प्रति **आसक्ति** से बढ़ता है, और **अनासक्ति** से घटता है। जैसे चेतन आकाश में जगत आभासी है, उसी तरह अचेतन आकाश भी। इसीलिए **सांख्य दर्शन** अचेतन आकाश को भी चेतन आकाश की तरह शाश्वत मानता है। हालांकि सर्वोच्च स्कूल ऑफ़ थॉट **वेदांत दर्शन** स्पष्ट करता है कि अचेतन आकाश चेतन आत्माकाश में वास्तविक नहीं आभासी है।

पूर्णता की अनुभूति भाव रूपी चेतन आकाश के अनुभव से ही होती है, अभाव रूपी अचेतन आकाश के अनुभव से नहीं

जरा गहराई से सोचें तो यह अनुभवसिद्ध भी है। किसीको अचेतन आत्माकाश के अनुभव से यह महसूस नहीं होता कि उसे सबकुछ महसूस हो गया या वह पूर्ण हो गया, उसे कुछ जानने, करने और भोगने के लिए कुछ शेष बचा ही नहीं। पर ऐसा चेतन आत्माकाश के अनुभव से महसूस होता है। इससे मतलब स्पष्ट हो जाता है कि असल में चेतनाकाश ही सत्य और अनंत है,

आम अनुभव में आने वाला भौतिक जगत तो उसमें मामुली सी, व मिथ्या अर्थात आभासी तरंग की तरह है।

सृष्टि ब्रह्म की तरह अनिर्वचनीय व अनुभवरूप है

जगत कल्पनिक है, मतलब स्थूल भौतिक जगत काल्पनिक है, क्योंकि उस तक हमारी पहुंच ही नहीं है। मानसिक सूक्ष्म जगत काल्पनिक नहीं क्योंकि यह तो अनुभव होता है। हालांकि सूक्ष्म भी स्थूल के सापेक्ष ही है। जब स्थूल ही नहीं तो सूक्ष्म कैसे हो सकता है। मतलब कि स्थूल-सूक्ष्म आदि सभी विरोधी व द्वैतपूर्ण भाव काल्पनिक हैं। इसलिए जगत सिर्फ अनुभव रूप है, **अनिर्वचनीय** है। इसे ही गूंगे का गुड़ कहते हैं। हर कोई **ब्रह्म** में ही स्थित है, केवल स्तर का फर्क है। जागृत व्यक्ति ज्यादा स्तर पर, अन्य विभिन्न प्रकार के निचले स्तरों पर। पूर्ण कोई नहीं।

एक दार्शनिक थोट एक्सीपेरिमेंट

विज्ञान जो अपने को कट्टर प्रयोगात्मक, वास्तविक व वस्तुपरक मानता है, वह भी आजकल बहुत से दार्शनिक विचार-प्रयोग प्रस्तुत कर रहा है, जिन्हें भौतिक प्रयोगों से बिल्कुल भी सिद्ध नहीं किया जा सकता। फिर हम थोट एक्सपेरिमेंट करने से क्यों हिचकिचाएं, क्योंकि कुण्डलिनी का क्षेत्र **भौतिक विज्ञान** से ज्यादा दार्शनिक व अनुभवात्मक है। वह **विचार-प्रयोग** है, सृष्टि के सूक्ष्मतम **मूलकण** को कुण्डलिनी योग का अभ्यास मानना। वैसे शास्त्रों से यह बात प्रमाण-सिद्ध है। **वेद-शास्त्रों** को भी भौतिक प्रत्यक्ष प्रमाण की तरह प्रत्यक्ष प्रमाण माना गया है, कई मामलों में तो भौतिक से भी ज्यादा, जैसे ईश्वर व जागृति के मामलों में।

इड़ा और पिंगला नाड़ियाँ ही सूक्ष्मतम तरंग के क्रेस्ट या शिखा और ट्रफ या गर्त हैं

मूलकणरूपी **स्टैंडिंग वेव** वह हो सकती है, जब **स्वाधिष्ठान** चक्र और **आज्ञा चक्र** के जोड़े को या **मूलाधार** और **सहस्रार** बिंदु के जोड़े को एकसाथ अंगुली से दबाकर उनके बीच कभी **इड़ा** से शक्ति की तरंग दौड़ती है, कभी **पिंगला** से, और बीचबीच में **सुषुम्ना** से। मूलाधार **यिन** या **पाताल** या **प्रकृति** है,और आज्ञा या सहस्रार **यांग** या **स्वर्ग** या **पुरुष** है। बीच वाली सुषुम्ना नाड़ी ही मूल कण या दुनिया का असली रूप है, क्योंकि उससे ही कुण्डलिनी अर्थात मन अर्थात दुनिया का प्रदुर्भाव होता है।

अस्थायी मूलकण अल्प योगाभ्यास के रूप में है जबकि स्थायी मूलकण सम्पूर्ण योगाभ्यास के रूप में

जैसे आदमी में मूलाधार और सहस्रार के बीच में **शक्ति** का प्रवाह लगातार जारी रहता है, उसी तरह मूलकण में प्रकृति और पुरुष के बीच। इसीलिए तो तरंग लगातार चलती रहती है, कभी स्थिर नहीं होती। यह स्थिर या असली कण के जैसा है। आभासी कण उस प्रारम्भिक योगाभ्यास की तरह है, जिसमें इड़ा और पिंगला में शक्ति का प्रवाह थोड़ी-थोड़ी देर के लिए होता है, और कम प्रभावशाली होता है। इसीलिए ये अस्थायी कण थोड़े ही समय के लिए प्रकट होते रहते हैं, और आकाश में लीन होते रहते हैं।

पार्टिकल मूलाधार से सहस्रार की ओर चल रही तरंग के रूप में है, जबकि एंटीपार्टिकल सहस्रार से मूलाधार को वापिस लौट रही तरंग के रूप में है

सृष्टि के अंत में सभी कणों के एंटीपार्टिकल पैदा हो जाएंगे जो एकदूसरे को नष्ट करके प्रलय ले आएंगे

मूलाधार यहाँ प्रकृति का प्रतीक है, और सहस्रार पुरुष का। उपरोक्त अस्थायी आभासी कण **प्लस और माइनस** रूप के दो विपरीत कणों के रूप में पैदा होते रहते हैं। इसका मतलब है कि कभी न कभी स्थायी मूलकणरूपी तरंग भी खत्म होगी ही, बेशक सृष्टि के अंत में। फिर विपरीत मूलकण रूपी तरंग सहस्रार से मूलाधार मतलब पुरुष से प्रकृति की तरफ उल्टी दिशा में चलेगी। ऐसे में हरेक प्लस मूलकण के ठीक उलट माइनस मूलकण बनेंगे। इससे **मूलकण और प्रतिमूलकण** एकदूसरे से जुड़कर एकदूसरे को निगल जाएंगे, और सृष्टि का अंत हो जाएगा। इसीको **प्रलय** कहते हैं। फिर लम्बे समय तक कोई तरंग नहीं उठेगी। इसे ही **नारायण का योगनिद्रा** में जाना कहा गया है। मतलब निद्रा में तो है, पर भी अपने पूर्ण आत्मजागृत स्वरूप में स्थित है। विज्ञान कहता है कि पार्टिकल के बनते ही एंटीपार्टिकल भी बन जाता है, पर वह कहीं गायब हो जाता है। हो सकता है कि सृष्टि के अंत में वे एंटीपार्टिकल दुबारा वापस आ जाते हों।

इस समय एंटीपार्टिकल गुरुत्वाकर्षण के रूप में हैं

मैं यह इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि कई वैज्ञानिक किस्म के लोग भी ऐसा ही कह रहे हैं। ग्रेविटी अंतरिक्ष में गड्ढे की तरह है। तरंग का आधा भाग भी गड्ढे की तरह होता है। दोनों किसी बल के कारण मिल नहीं पाते। इसलिए कण से निर्मित ग्रेविटी कण को अपनी तरफ खिंचती तो है, पर पूरी तरह उससे मिल नहीं पाती। जब तरंग का ऊपर का आधा भाग ही दिखता है, तो वह कण की तरह ही दिखता है। जब ग्रेविटी का गड्ढा भी उसके साथ देखा जाता है, तो वह कण तरंग रूप में आ जाता है। इसका मतलब है कि प्रलय के समय **गुरुत्वाकर्षण** ही सारी सृष्टि को निगल जाएगा।

क्वांटम ग्रेविटी का अस्तित्व है

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि **इलेक्ट्रोन**, **क्वार्क** आदि मूलकणों की भी ग्रेविटी है। यह सूक्ष्म कण द्वारा निर्मित अंतरिक्ष के आभासी सूक्ष्म गड्ढे के जैसे एंटीपार्टिकल के रूप में है। इसे विज्ञान ढूंढ नहीं पा रहा है, पर क्वांटम ग्रेविटी के अस्तित्व को नकार भी नहीं पा रहा है।

मूल तरंग का पहला नोड प्रकृति है, और दूसरा नोड पुरुष है

ये चित्रोक्त बिंदू स्टैंडिंग वेव के दो नोड हैं। एक कोने पर ब्लू डॉट **नेगेटिव** या **नॉर्थ पोल** नोड है और दूसरे कोने पर रेड डॉट **पॉजिटिव या साउथ पोल नोड** है। दोनों तरफ को झूलती तरंग ही सृष्टि बनाने के लिए इच्छा या सोचविचार है। केंद्रीय रेखा ही **ध्यान** रूपी या भाव रूप **सुषुम्ना** है, जो सृष्टि बनाने का पक्का निश्चय है। इसीलिए कहते हैं कि **ब्रह्मा** ने ध्यान रूपी **तप** से सृष्टि को रचा। मतलब प्रकृति एक नोड है और पुरुष दूसरा नोड। वैसे भी सृष्टि की उत्पत्ति प्रकृति-पुरुष संयोग से मानी गई है। प्रकृति अंधेरा आसमान है, और पुरुष स्वयंप्रकाश आकाश है। दोनों शाश्वत हैं। प्रकृति नेगेटिव नोड है, और पुरुष पॉजिटिव नोड है। इन दोनों के बीच बनने वाली स्थिर तरंग ही सबसे छोटा मूलकण है। इस तरह के कण आकाश में पॉप आउट होते रहते हैं और उसीमें मर्ज होते रहते हैं। इनको किसी चीज से जब स्थिरता मिलती है तो ये आगे से आगे जुड़कर अनगिनत कण बनाते हैं। इससे सृष्टि का विस्तार होता है। इसका मतलब कि सृष्टि का प्रत्येक कण योग कर रहा है। **पूरी सृष्टि योगमयी** है।

मूलकण एक कुण्डलिनी योगी है, जो कुण्डलिनी ध्यान कर रहा है

सूक्ष्मतम तरंग की नोड से नोड के बीच की न्यूनतम दूरी प्लेँक लेंथ बनती है

वैज्ञानिकों को क्वार्क से छोटा कोई कण नहीं मिला है। यह भी हो सकता है कि क्वार्क से छोटी तरंगें भी हैं, जैसा कि **स्ट्रिंग थ्योरी** कहती है, पर वे क्वार्क के स्तर तक बढ़ कर ही अपने को कण रूप में दिखा पाती हैं। केवल कण के स्तर पर ही तरंगें पकड़ में आती हैं। हो सकता है कि सबसे छोटी तरंग प्लेंक लेंथ के बराबर है, जो सबसे छोटी लम्बाई संभव है। उस प्लेँक तरंग का एक नोड प्रकृति है, और दूसरा पुरुष। वैसे प्रकृति और पुरुष एक ही हैं, केवल आभासी अंतर है। इस तरह प्लेँक लेंथ भी वास्तविक नहीं आभासिक है। आकाश में तरंग भी तो आभासी ही हो सकती है, असली नहीं। प्रकृति मतलब मूलाधार से एक शक्ति की तरंग पुरुष मतलब सहस्रार की तरफ उठती है, मतलब देव ब्रह्मा योगरूपी तप के लिए ध्यान लगाते हैं। वह तरंग इड़ा और पिंगला के रूप में बाईं और दाईं तरफ बारी-बारी से झूलने लगती है, मतलब ब्रह्मा ध्यान में डूबने की कोशिश करते हैं। ध्यान थोड़ा स्थिर होने पर शक्ति की तरंग बीच वाली आभासी जैसी सुषुम्ना नाड़ी में बहने लगती है। इसीलिए कण भी आभासी या एज्यूम्ड ही है, असली तो तरंग ही है। इससे कुण्डलिनी चित्र मन में स्थिर हो जाता है, मतलब पहला और सबसे छोटा मूलकण बनता है। फिर तो आगे से आगे सृष्टि बढ़ती ही जाती है। आज भी तो सारी सृष्टि बाहर के खुले व खाली अंतरिक्ष की तरफ भाग रही है, मतलब वही मूल स्वभाव बरकरार है कि प्रकृति से पुरुष की तरफ जाने की होड़ लगी है। सृष्टि की हरेक वस्तु और जीव का एक ही मूल स्वभाव है, अचेतनता से चेतनता की ओर भागना।
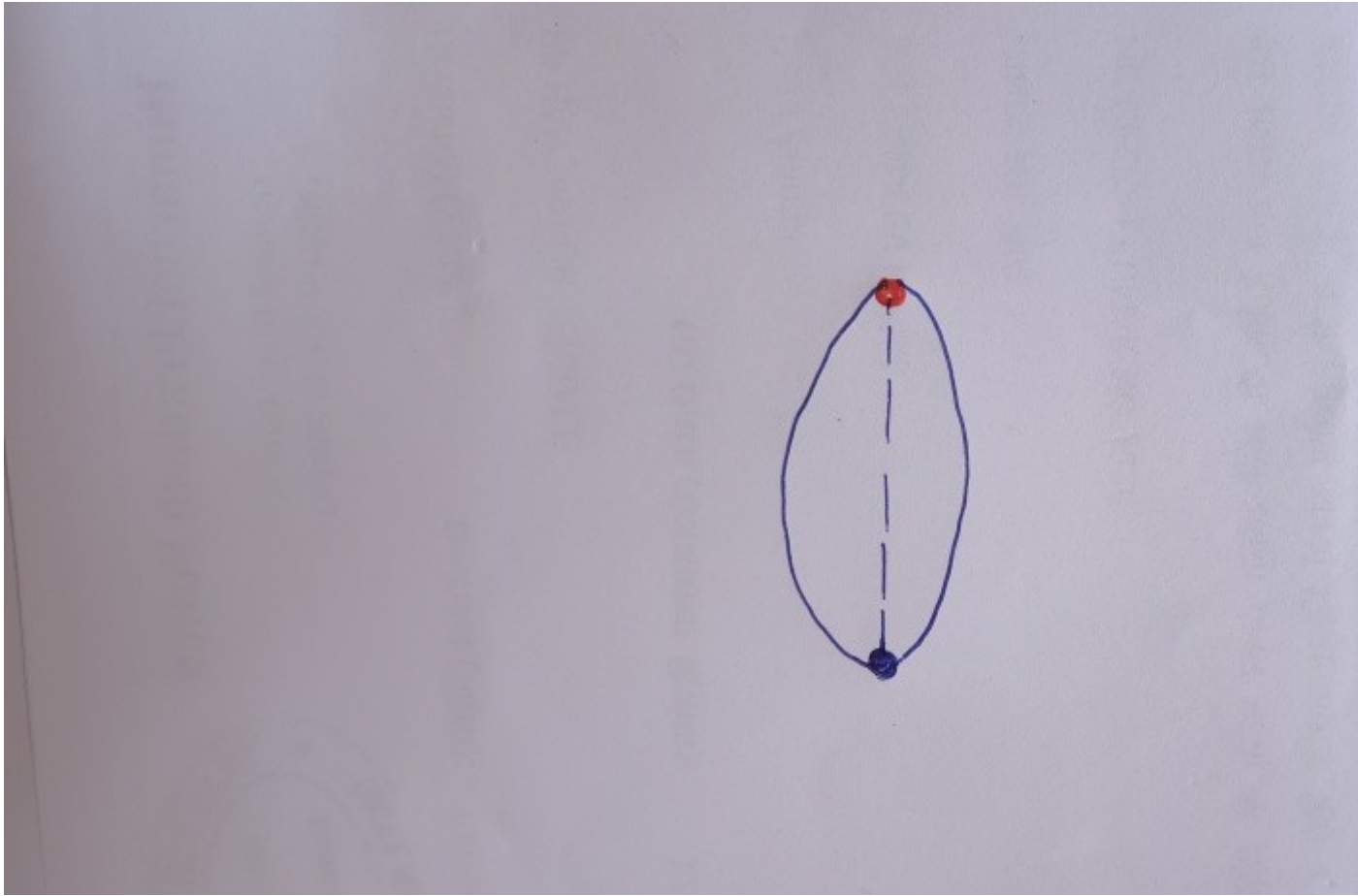
मूलकण

अध्याय-3

कुण्डलिनी योग भी एक लहर ही है

दोस्तों, एक **विचार-प्रयोग** के माध्यम से देखने में आता है कि सृष्टि के अंत में कैसे **गुरुत्वाकर्षण** सभी चीजों को निगल जाएगा। कई वैज्ञानिक भी ऐसा ही अंदाजा जता रहे हैं, जिसे **बिग क्रन्च** नाम दिया गया है।

साथ में मूलकण के तरंग स्वभाव के बारे में भी बात चली थी। हवा, पानी आदि भौतिक तरंगों के मामले में देखने में आता है कि क्रेस्ट और ट्रफ एकसाथ नहीं बन सकते। जब क्रेस्ट बनाने के लिए जल सतह से ऊपर की तरफ उठेगा, तो उसी समय उसी जगह पर वह ट्रफ के रूप में सतह के नीचे नहीं डूब सकता। पर आकाश की तरंग के मामले में ऐसा हो सकता है, क्योंकि यह आभासी है, और इसके लिए किसी भौतिक वस्तु या माध्यम की जरूरत नहीं है। इसीलिए एकसाथ **त्रिआयामी क्रेस्ट और ट्रफ** बनने से मूलतरंग मूलकण की तरह भी दिखती है, और उसके जैसा व्यवहार भी करती है, जैसा चित्रोक्त किया गया है। मूलकण रूपी तरंग ऐसे ही क्रेस्ट और ट्रफ बनाते हुए आगे से आगे बढ़ती रहती है, क्योंकि **प्रकृति और पुरुष** हर जगह विद्यमान हैं, और प्रकृति से पुरुष की तरफ दौड़ हर जगह चली रहती है। इसीलिए मूलकण कई जगह एकसाथ दिखाई देते हैं। पिछले क्रेस्ट से अगला ट्रफ बनता है, और पिछले ट्रफ से अगला क्रेस्ट, क्योंकि प्रकृति को **सीमेट्री** प्यारी है। इस तरह अनगिनत तरंगों के रूप में अंतरिक्ष में अनगिनत सूक्ष्म लूप बन जाते हैं। मतलब पूरा आकाश लूपों में बंटा हुआ सा लगता है। **क्वांटम लूप थ्योरी** भी यही कहती है कि अंतरिक्ष सपाट न होकर सूक्ष्मतम टुकड़ों में बंटा है। उससे छोटे टुकड़े नहीं हो सकते। पर अगर सिद्धांत से देखा जाए तो हरेक चीज टूटते हुए सबसे छोटी जरूर बनेगी। वह विशेषता से रहित शून्य आसमान ही है। जिसे अंतरिक्ष का क्वांटम लूप कहा गया है, वह दरअसल शून्य अंतरिक्ष का अपना स्वाभाविक रूप नहीं है, बल्कि **अंतरिक्ष** में आभासी मूलकण है। इससे इन सभी बातों का उत्तर मिल

जाता है कि तरंग कण के जैसे क्यों व्यवहार करती है, **स्टैंडिंग वेव** और **प्रॉपेगेटिंग वेव** कैसे बनती है आदि। कोई भी लहर वास्तव में ध्यानरूप ही है। **इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना** नाड़ियाँ लहर के रूप में ही चलती हैं। लहर में कोई चीज आगे नहीं बढ़ती, लहर बनाने वाली चीज केवल अपने स्थान पर आगे-पीछे या ऊपर-नीचे कांप कर अपनी पूर्ववत जगह पर आ जाती है। केवल लहर आगे बढ़ती है। वैसे भी **शून्य** जैसे अंतरिक्ष में कोई चीज है ही नहीं प्रकट होने को। इसलिए एकमात्र लहर का ही विकल्प बचता है। वहाँ तो अपनी जगह पर कांपने के लिए भी कोई चीज नहीं है। इसलिए झूठमूठ में ही कंपन दिखाया जाता है। यह नहीं पता कि कैसे। प्रकाश जिसको ईश्वररूप या दैवरूप माना जाता है, लहर के रूप में ही चलता है। इसी तरह अग्नि भी।

नाड़ी की गति भी लहर के रूप में ही होती है

नाड़ी में संवेदना लहर के रूप में आगे बढ़ती है। इसमें **सोडियम-पोटाशियम पम्प** काम करता है। सोडियम और पोटाशियम आयन अपनी ही जगह पर नाड़ी की दीवार से अंदर-बाहर आते-जाते रहते हैं, और संवेदना की लहर आगे बढ़ती रहती है।

लहर सूचना को आगे ले जाती है

तालाब में कहीं पर कंकड़ मारने से उसके पानी पर लहर पैदा होकर चारों तरफ फैल जाती है। उससे जलीय जंतु संभावित खतरे से सतर्क हो जाते हैं। जमीन पर चलने से उस पर एक लहर पैदा हो जाती है, जिसे सांप आदि जंतु पकड़कर सतर्क हो जाते हैं या भाग जाते हैं। वायु से आवाज के रूप में सूचना संप्रेषण के बारे में तो सभी जानते हैं। मूलाधार से संवेदना की लहर सहस्रार तक जाती है, जिससे सहस्रार सतर्क अर्थात क्रियाशील हो जाता है। सतर्क कालरूपी शत्रु से होता है, जो हर समय मौत के रूप में आदमी के सामने मुंह बाँए खड़ा रहता है। इसलिए **सहस्रार अद्वैत** के साथ सांसारिक

अनुभूतियों के रूप में जागृति या **आध्यात्मिक जीवनयापन** के लिए प्रयास करता है। वैसे दुनियादारी में सफलता भी सहस्रार से ही मिलती है, क्योंकि वही अनुभूति का केंद्र है।

जीवात्मा विद्युतचुंबकीय तरंगों की सहायता से अपने अंदर आभासी संसार को महसूस करता है

नाड़ी में **चार्जड पार्टिकलस** की गति से आसपास के आकाश में विद्युत्चुंबकीय तरंग बनती है। उस तरंग से सहस्रार के **आत्म-आकाश** में आभासी तरंगें बनती महसूस होती हैं। इसीलिए कहते हैं कि आत्मा का स्थान सहस्रार है। यह आश्चर्य की बात है कि अनगिनत स्थानों पर विद्युत्चुंबकीय तरंगों से आकाश में अनगिनत आभासी कलाकृतियाँ बनती रहती हैं, पर वे केवल जीवों के मस्तिष्क के सहस्रार में ही आत्मा को महसूस होती हैं। अगर उसकी बनावट व उसकी कार्यप्रणाली की सही जानकारी मिल जाए तो हो सकता है कि **कृत्रिम जीव** व **कृत्रिम मस्तिष्क** का निर्माण भी **विज्ञान** कर पाए।

अध्याय-4

कुण्डलिनी योग से ही ब्रह्माण्ड एक देवता या विशालकाय एलियन बनता है

शून्य में विद्युत्चुंबकीय तरंग

दोस्तों, **विद्युत्चुंबकीय क्षेत्र** या तरंग से मानसिक दुनिया बनती है। तो फिर यह क्यों न मान लिया जाए कि बाहर का भौतिक संसार भी इन्हीं तरंगों से बनता है। यही अंतर है कि **मानसिक संसार** में ये तरंगें अस्थिर होती हैं, और आँखों आदि इन्द्रियों के माध्यम से बाहर से लाई जा रही सूचनाओं के अनुसार लगातार बदलती रहती हैं, पर बाहर के स्थूल जगत में ये किसी बल से स्थिरता पाकर **स्थायी मूलकणों** की तरह व्यवहार करने लगती हैं, जिनसे दुनिया आगे से आगे बढ़ती जाती है। दिमाग़ में तो विद्युत्चुंबकीय तरंग मूलाधार से आ रही ऊर्जा से बनती है, पर बाहर शून्य अंतरिक्ष में यह ऊर्जा कहाँ से आती है, यह खोज का विषय है।

फील्ड से कण और कण से फील्ड का उदय

क्वांटम फील्ड थ्योरी सबसे आधुनिक और स्वीकृत है। इसके अनुसार हरेक कण और बल की एक सर्वव्यापी फील्ड मौजूद होती है। फील्ड मतलब प्रभाव क्षेत्र, कण की फील्ड मतलब कण का प्रभाव क्षेत्र। अंतरिक्ष शून्य नहीं बल्कि इन फील्डों से भरा होता है। फील्ड मतलब पोटेंशल, तरंग व कण बनाने की योग्यता। यह फील्ड एक सबसे हल्के स्तर की लहर होती है। मुझे लगता है यह ऐसे है कि जब एक कंकड़ एक जल-सरोवर में गिराया जाता है तो एक मुख्य लहर के साथ छोटी लहरों के झुंड के रूप में विक्षोभ पैदा होता है।

मुख्य बड़ी तरंग कण के समान है और छोटी तरंगें उसके क्षेत्र या फील्ड के समान हैं। जिस क्षेत्र तक इन सूक्ष्म तरंगों का अनुभव होता है, वह कण के रूप में स्थित उस मुख्य तरंग का फील्ड का दायरा होता है। जब **इलेक्ट्रोन की फील्ड** में किसी पॉइंट को एनर्जी मिलती है तो वहां फील्डरूपी छोटी लहर का एम्प्लीचूड या आयाम बढ़ जाता है, और वहाँ एक कण का उदगम होता है। वह इलेक्ट्रोन है। ये आधारभूत फील्ड सबसे छोटे कण **क्वार्क** से भी सूक्ष्म होती हैं। इसी तरह इलेक्ट्रोन के चारों तरफ भी एक फील्ड बनती है। मतलब इलेक्ट्रोन रूपी बड़ी लहर के चारों तरफ भी एक सूक्ष्म लहरों का क्षेत्र बन जाता है। वह **प्रोटोन** से भी इसी **इलेक्ट्रोमेग्नेटीक फील्ड** से ही दूर से आकर्षित होकर उससे जुड़ जाता है। इस आकर्षण की फील्ड तरंगों से भी विशेष सूक्ष्म कण सम्भवतः फोटोन पैदा होता है, जो इस आकर्षण को क़ायम करता है। इस तरह फील्ड से कण और कण से फील्ड पैदा होकर बाहर की स्थूल संसार रचना को आगे से आगे बढ़ाते रहते हैं।

अव्यक्त से व्यक्त और व्यक्त से अव्यक्त का उदय

मन भी तो क्वांटम फील्ड की तरह होता है। इसमें हरेक किस्म का संकल्प अदृष्य रूप अर्थात अदृष्य लहर के रूप में रहता है। इसे सांख्य दर्शन के अनुसार अव्यक्त कहते हैं। जब इसे मूलाधार से एनर्जी मिलती है, तब इस **मानसिक क्वांटम फील्ड** की लहरें बड़ी होने लगती हैं, जो स्थूलकण रूपी चित्रविचित्र संसार पैदा करती हैं। उससे और फील्ड पैदा होती है, जिससे और विचार पैदा होते हैं। इस तरह यह सिलसिला चलता रहता है और आदमी के विचार रुकने में ही नहीं आते। अव्यक्त से व्यक्त और व्यक्त से अव्यक्त पैदा होकर भीतरी मानसिक संसार रचना को आगे से आगे बढ़ाते रहते हैं।

क्वांटम भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक मनोविज्ञान के बीच समानता

प्रकृति या **अव्यक्त** ही वह हल्के स्तर की आधारभूत लहर है। अव्यक्त व्यक्त से ही बना है, अव्यक्त मतलब हल्के स्तर का व्यक्त। हालांकि उसके मूल में भी निश्चेष्ट या **अवर्णनीय पुरुष** ही है। अंत के पैराग्राफ में बताऊंगा कि निश्चेष्ट या गतिहीन पुरुष क्यों कुछ काम नहीं कर पाता। क्यों उसे मूक दर्शक की तरह माना जाता है, जो अपनी उपस्थिति मात्र से प्रकृति की मदद तो करता है, पर खुद कुछ नहीं करता। सारा काम प्रकृति ही करती है। पुरुष अर्थात शुद्ध आत्मा एक **चुंबक** की तरह है जिसकी तरफ खिंच कर ही प्रकृति से सब काम अनायास ही खुद ही होते रहते हैं। इसीलिए कहते हैं कि जो भगवान के सहारे है, उसका जीवन खुद ही अच्छे से कट जाता है। पर **भगवान** असली और अच्छी तरह से समझा हुआ होना चाहिए, जो **कुण्डलिनी योग** से ही संभव है। जैसे हमारा हरेक कर्म और विचार संस्कार रूप से पहले से ही सूक्ष्म रूप में हमारी अव्यक्त प्रकृति के रूप में मौजूद होता है, जिसे **सूक्ष्म शरीर** कहते हैं, उसी तरह हरेक क्वांटम कण भी अपनी क्वांटम फील्ड के रूप में पहले से ही मौजूद होता है। **व्यष्टि मूलाधार** मतलब शारीरिक मूलाधार से मिल रही शक्ति से व्यष्टि अव्यक्त मतलब शरीरबद्ध अव्यक्त या व्यष्टि फील्ड में क्षोभ पैदा होता है, जिससे विभिन्न लहरों के रूप में विचारों मतलब व्यष्टि मूलकणों का उदय होता है। इसी तरह **समष्टि मूलाधार** अर्थात ब्रह्माण्डव्याप्त मूलाधार अर्थात मूल प्रकृति से उत्पन्न शक्ति से समष्टि क्वांटम फील्ड में क्षोभ पैदा होता है, जिससे समष्टि मूलकण पैदा होते हैं। पर समष्टि जगत में ये शक्ति कहाँ से आती है? **दार्शनिक** तौर पर तो मूल प्रकृति को समष्टि मूलाधार मान सकते हैं, क्योंकि दोनों में मूल शब्द जुड़ा है, और दोनों ही सब सांसारिक रचनाओं के मूल आधार या नींव के पहले पत्थर हैं हैं, पर इसे वैज्ञानिक रूप से कैसे सिद्ध करेंगे? व्यष्टि के मूलाधार की तरह समष्टि मूलाधार में भी कोई **सम्भोग** क्रिया और उससे उत्पन्न सम्भोग-शक्ति होनी चाहिए। तो उसे पुरुष और प्रकृति के बीच सम्भोग क्यों न माना जाए, जिसका इशारा शास्त्रों में किया गया है।

संतानोत्पत्ति की प्रक्रिया तांत्रिक कुण्डलिनी योग का भौतिक मार्ग ही है

दरअसल जीवों का जो अव्यक्तरूप सूक्ष्म शरीर है, वह मरने के बाद और भी सूक्ष्म हो जाता है, क्योंकि उस समय उसे स्थूल शरीर से बिल्कुल भी ऊर्जा नहीं मिल रही होती है। वह एक घने अँधेरे **आत्माकाश** की तरह हो जाता है, जिसका अंधेरा उसमें छिपे हुए अव्यक्त जगत के अनुसार होता है। वह अव्यक्त जगत भी व्यक्त जगत के अनुसार ही होता है। इसीलिए सब जीवों के सूक्ष्म शरीर उनके स्थूल स्वभाव के अनुसार अलग-अलग होते हैं। इस तरह से बहुत से जीवों के अव्यक्त आत्माकाश जब समष्टि **अव्यक्ताकाश मतलब मूल प्रकृति** के साथ कंधे से कंधा मिलाकर एक निश्चित सीमा से ज्यादा अव्यक्त भाव अर्थात अंधकारमय आकाश बना देते हैं, तब वहाँ से एक शक्ति की लहर पुरुष की तरफ छलांग लगाती है। इसी से क्वांटम फील्ड में लहरों का एम्प्लीच्युड आदि बढ़ने से मूलकणों का उदय और सृष्टि का विस्तार शुरु होता है। यह ऐसे ही है जैसे कभी कोई आदमी अपनी सहन-सीमा से ज्यादा ही **गम या अवसाद के अँधेरे में** डूबने लग जाए, तो वह सम्भोग की सहायता से अपने मूलाधार के अँधेरे में डूबे अपने अव्यक्त मानसिक जगत को ऊपर चढ़ती हुई शक्ति के साथ **सहस्रार** की तरफ भेजने की कोशिश करता है, ताकि उसके विचारों का मानसिक संसार पुनः प्रकाशित होने लगे। शक्ति तो खुद एक वाहक या बल है, जो अव्यक्त जगत को व्यक्त बनाने में मदद करती है। शास्त्रों में भी यही कहा है कि जब जीवों के कर्म, फल देने को उन्मुख हो जाते हैं, अर्थात जब जीव अंधकार से ऊबने जैसे लगते हैं, तब वे **प्रलय** के बाद पुनः **सृष्टि** को प्रारम्भ करने की प्रेरणा देते हैं। यह सामूहिक अर्थात समष्टि सृष्टि और प्रलय है। व्यक्तिगत सृष्टि और प्रलय तो हरेक जीव के जन्म और मरण के साथ चली ही रहती है। सहज व प्राकृतिक मृत्यु के बाद कुछ समय तो जीव चैन की बंसी बजाता हुआ अव्यक्त में आराम करता है, फिर जल्दी ही उससे **ऊब** जाता है। इसलिए उस अव्यक्तरूप जीव को व्यक्त करने के लिए शक्ति पुरुष की

तरफ बढ़ने की कोशिश करना चाहती है। देखा जाए तो शक्ति जाती कहीं नहीं है, क्योंकि पुरुष, प्रकृति और शक्ति तीनों व्यष्टि मूल प्रकृति में साथ-साथ ही रहते हैं। ऐसे ही जैसे अव्यक्त, व्यक्त और उनको बनाने वाली शक्ति मस्तिष्क में ही रहते हैं, पर अव्यक्त जगत मूलाधार से ऊपर चढ़ता हुआ महसूस होता है, क्योंकि पुरुष या मस्तिष्क की शक्ति को प्रेरित करने वाला विशेष **सेकसुअल बल** मूलाधार से ऊपर चढ़ता है। उसके लिए सम्भोग के माध्यम से एक आदमी और एक औरत का आपसी मिलन जरूरी होता है। संयोगवश उस मृत जीव की जीवात्मा किसी सम्भोगरत आदमी और औरत के जोड़े के मिश्रित मूलाधार में स्थित अव्यक्त जगत से मेल खाती है। दोनों का मिश्रित अव्यक्त जगत संभोग-शक्ति के माध्यम से ऊपर उठते हुए दोनों के हरेक चक्रोँ में दबी हुई भावनाओं व छिपे हुए विचारों को अपने साथ ले जाकर सहस्रार में आनंद के साथ व्यक्त हो जाता है, और एकदूसरे के सहस्रार चक्रोँ में आपस में मिश्रित ही बना रहता है। आदमी के सहस्रार से वह मिश्रित जगत आगे के चैनल से शक्ति के साथ नीचे उतरकर **वीर्य** में रूपांतरित होकर औरत के **गर्भ** में प्रविष्ट होकर एक बालक का निर्माण करता है। इसीलिए बालक में माता और पिता दोनों के गुण मिश्रित होते हैं। इसीलिए **मांबाप** के व्यवहार का बच्चों पर गहरा असर पड़ता है, क्योंकि तीनों की एनर्जी आपस में जुड़ी होती है। **इसीलिए व्यवहार में देखा जाता है कि सम्भोग सुख के साथ प्रेम से रमण करने के आदी दम्पत्ति की संतानें बहुत तरक्की करती हैं, भौतिक रूप से भी और आध्यात्मिक रूप से भी। इसके विपरीत आपस में अजनबी जैसे रहने वाले दंपत्तियों के बच्चे अक्सर कुंठित से रहते है**ं। यह अलग बात है कि कई अच्छी किस्मत वाले लोग इधरउधर से गुजारा कर लेते हैं। हाहा। अनुभवी **तंत्रयोगी** सम्भोग की, जगत को व्यक्त करने वाली कुण्डलिनी शक्ति को अपने सहस्रार में केवल एक ही **ध्यानचित्र** पर **फोकस** करते हैं, और उसे वीर्य रूपी **बीज** में नीचे न उतारकर लम्बे समय तक वहीं रोककर रखते हैं, जिससे वह मानसिक चित्र जागृत हो जाता है। इसे ही **तांत्रिक कुण्डलिनी जागरण** कहते हैं।

पूरा ब्रह्माण्ड ही एक एलियन

इन उपरोक्त तथ्यों का मतलब है कि ब्रह्माण्ड भी एक **विशालकाय जीव** या मनुष्य की तरह व्यवहार करता है। इससे वैदिक उक्ति, "**यत्पिंडे तत् ब्रह्मान्डे**" यहाँ भी वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो जाती है। इसका मतलब है कि जो कुछ भी छोटी चीज जैसे शरीर में है, वही ब्रह्माण्ड में भी है, अन्य कुछ नहीं। **पिंड** यहाँ **शरीर** को ही कहा है, अन्य किसी चीज को नहीं, क्योंकि किसीकी मृत्यु के बाद जब उसे **श्राद्ध** आदि के द्वारा खाने-पीने की चीजें दी जाती हैं, उसे **पिंडदान** कहते हैं। क्योंकि अगर हरेक छोटी चीज के बारे में कहना होता तो अंडे, खंडे आदि दूसरे शब्द ज्यादा बेहतर होते, पिंडे नहीं। दूसरा, **पंजाबी भाषा** में वह स्थान जहाँ लोग सामूहिक रूप से एकसाथ रहते हैं, जिसे गाँव कहते हैं, वह पिंड कहलाता है। मूल प्रकृति ब्रह्माण्ड का मूलाधार है, और चेतन पुरुष या परमात्मा इसका सहस्रार या उसमें कुण्डलिनी जागरण है। चित्रविचित्र संसारों की रचना के रूप में ही इसका जीवनयापन या **कर्मयोग** या इसका कुण्डलिनी जागरण की तरफ बढ़ना है। ऐसा यह **अद्‌वैत** के साथ करता है। शास्त्रों में ऐसा ही लिखा है कि **ब्रह्मा** खुद कहते हैं कि वे अद्‌वैतभाव के साथ सृष्टि की रचना करते हैं, जिससे वे **जन्ममरण के बंधन** में नहीं पड़ते। इसलिए यही इसका कुण्डलिनी योग है। अद्‌वैत और कुण्डलिनी योग आपस में जुड़े हुए हैं। सृष्टि का संपूर्ण निर्माण ही इसका कुण्डलिनी जागरण है। जैसे कुण्डलिनी जागरण के बाद आदमी को लगता है कि उसने सबकुछ कर लिया, इसी तरह सबकुछ कर लेने के बाद ब्रह्मा को कुण्डलिनी जागरण होता है, यह इसका मतलब है। इसके बाद सृष्टि निर्माण से उपरत होकर इसका **संन्यास** लेना ही सृष्टि विस्तार का धीमा पड़ना और रुक जाना है। देहांत के बाद इसका **परम तत्त्व** में मिल जाना ही प्रलय है। शास्त्रों में इसीलिए देव ब्रह्मा की कल्पना की गई है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही जिसका शरीर है। आजकल **विज्ञान** भी इस अवधारणा पर विश्वास करने लग गया है। इसीलिए एक **वैज्ञानिक थ्योरी** यह भी सामने

आ रही है कि हो सकता है कि पूरा ब्रह्माण्ड ही एक विशालकाय एलियन हो।

जिसे हम अंधेरनुमा शून्य या अव्यक्त कहते हैं, वह भी खाली नहीं बल्कि सीमित उतार-चढ़ाव वाली जगतरूपी तरंगों से भरा होता है

अगर चैतन्यमय आत्माकाश या परमात्मा में कोई बहुत ज्यादा स्थित हो जाए या लगातार आत्माकाश में ही स्थित रहने लगे तो वह कुछ काम भी नहीं कर सकता। वह **पराश्रित** व नादान सा रहता है संन्यासी की तरह। इसका मतलब है कि उस समय उसमें व्यक्त दुनिया अव्यक्त आकाश के रूप में नहीं रहती। मतलब वह शुद्ध आत्माकाश बन जाता है। मतलब उसके आत्माकाश में क्वांटम फील्ड नाम की बिल्कुल भी **वाइब्रेशनस** नहीं रहतीं। वह पूर्ण चिदाकाश बन जाता है। इसी वजह से स्थूल ब्रह्माण्ड में भी उस जगह आकाश खाली होता है, जहाँ वाइब्रेशन नहीं होतीं। अन्य स्थान **ग्रहों-सितारों** से भरे होते हैं। **वर्चुअल पार्टिकल** तो बनते रहते हैं थोड़ी-बहुत वाइब्रेशन से। मतलब थोड़ा-बहुत काम-वाम तो वे संन्यासी भी कर लेते हैं, पर कोई निर्णायक कार्य-अभियान या व्यापार-धंधा नहीं चला पाते। हाँ, एक बीच वाला हरफनमौला तरीका भी है कि तांत्रिक योग से आत्माकाश में लगातार **कंपन** बनाते भी रहो और मिटाते भी रहो, और सबकुछ करते हुए भी उससे अछूते बने रहो।

अध्याय-5

कुण्डलिनीयोगानुसार क्वांटम एन्टेंगलड पार्टिकल्स डार्क मैटर से आपस में ऐसे ही जुड़े होते हैं जैसे दो प्रेमी सूक्ष्मशरीर से आपस में जुड़े होते हैं

दोस्तों, **सूक्ष्मशरीर** से सम्पर्क अक्सर होता रहता है। जिससे प्रेमपूर्ण संबंध हो, उसके सूक्ष्मशरीर से सम्पर्क जुड़ा होता है। इसी तरह जिसके सूक्ष्मशरीर से सम्पर्क जुड़ा होता है, उससे प्यार भी होता है। खाली स्थूलशरीर से प्यार नहीं हो सकता। **सऊलमेट** को ही देख लो। उनको ऐसा लगता है कि वे एकदूसरे की **मिरर इमेज़** हैं। बेशक उनकी शक्ल आपस में न मिलती हो, पर उनके मन आपस में बहुत ज्यादा मेल खाते हैं। उनमें एक लड़का होता है, और एक लड़की। बेशक **यौन आकर्षण** भी उन्हें एकदूसरे के नजदीक लाते हैं, पर इससे एकदूसरे से नजदीकी से रूबरू ही हो सकते हैं, इससे **प्यार** पैदा नहीँ किया जा सकता। तभी तो आपने देखा होगा कि आदमी सेक्स से संतुष्ट ही नहीं होता। यदि **सम्भोग** में प्यार पैदा करने की शक्ति होती तो आदमी का कभी **तलाक** न हुआ करता, आदमी एक से ज्यादा शादियां न करता, और न ही एक से ज्यादा महिलाओं से यौनसंबंध बनाता। मुझे लगता है कि सेकसुअल सम्पर्क एक निरीक्षण अभियान है, जिससे आदमी नजदीक जाकर यह पता लगाता है कि उसे अमुक से प्यार है कि नहीँ। यह अलग बात है कि कई लोग इस सर्वे में इतना गहरा घुस जाते हैं कि बाहर ही नहीं निकल पाते और मजबूरी में वहीं रहकर समझौता कर लेते हैं। कइयों को

लगता होगा कि मैं विरोधी बातें करता हूँ। मैं ओपन माइंड रहना पसंद करता हूँ, किसी भी विशेष सोच से चिपके रहना नहीं। कई जगह मैंने कहा है कि संभोग में प्यार को पैदा करने की शक्ति है। यह भी सही है, पर शर्त लागू होती है। इसके लिए काफी समय, प्रयास व संसाधनों की आवश्यकता होती है। जब बना बनाया खाना मिलने की उम्मीद हो, तो खुद क्यों बनाना भाई। गहरे स्त्रीपुरुष प्यार में सूक्ष्मशरीर बेशक आपस में जुड़े हों, पर वे एकदूसरे से बदले नहीँ जा सकते। गहरे प्यार में एकदूसरे से टेलीपेथीक सम्पर्क बन जाता है, एकदूसरे की सोच और जीवन एकदूसरे को प्रभावित करने लगते हैं। अगर एक पार्टनर कुछ सोचे तो दूसरे के साथ वैसा ही होने लगता है, बेशक वह कितना ही दूर क्यों न हो। मतलब साफ है कि वे एकदूसरे के सूक्ष्मशरीर से प्रभावित होते हैं। पर पता नहीँ क्यों तीसरे सूक्ष्मशरीर के अखाड़े में प्रवेश करने से सभी परेशान होने लगते हैं। हाहा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि सूक्ष्मशरीर **अनंत आकाश** की तरह **सर्वव्यापी** है। एकबार मेरे **विश्वविद्यालय** के मित्र के पिता का देहावसान हुआ था। उनसे मैं कई बार प्रेमपूर्ण माहौल में मिला भी था। वह मुझसे सैंकड़ों किलोमीटर दूर थे। मुझे कुछ पता नहीँ था। उसी रात मुझे नींद में अपने पिता की मृत्यु की जीवंत तस्वीर दिखी थी। मैं उसकी वजह नहीँ समझ पा रहा था। अगले दिन जब मुझे खबर मिली तब बात समझ में आई। उस दौरान मैं गहन **तांत्रिक कुण्डलिनी योग** अभ्यास करता था, संभवतः उससे ही इतना जीवंत महसूस हुआ हो। लगता है कि **क्वांटम एन्टेंगलमेंट** भी यही है। दोनों एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स आपस में सूक्ष्मशरीर जैसी चीज से जुड़े हो सकते हैं। यह तो जाहिर ही है कि दृश्य **ब्रह्माण्ड** के आधार में **डार्क मैटर** और **डार्क एनर्जी** से भरा **अनंत अंतरिक्ष** होता है। यह भी पता है कि वही दृश्य जगत के रूप में उभरता है, उसी के नियंत्रण में रहता है, और नष्ट होने पर वही बनकर उसी में समा जाता है। इसका मतलब है कि डार्क मेटर और दृश्य जगत केवल आपस में बारबार रूप बदलता रहता है, कभी न तो कुछ नया बनता है, और न ही बना हुआ नष्ट होता है। यह दुनिया पहले भी हनेशा थी, आज भी है, और आगे भी हमेशा रहेगी। इसमें रोल प्ले करने वाले नए-

नए **कलाकार** आते रहेंगे, और मुक्तिरूपी परमानेंट नेपथ्य में जाते रहेंगे। एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स का सूक्ष्मशरीर एक ही होता है। वह सूक्ष्म शरीर उन पार्टिकल्स का डार्क मेटर है, जिससे वे बने हैं। इसीलिए जब एक पार्टिकल से छेड़छाड़ होती है, तो वह दूसरे को भी उसी समय प्रभावित करती है, बेशक वे दोनों एकदूसरे से कितनी ही दूरी पर क्यों न हो, बेशक एक कण **गेलेक्सी** के एक छोर पर हो और दूसरा दूसरे छोर पर। इसका मतलब है कि हरेक **फंडामेन्टल पार्टिकल** का अपना अलग डार्क मेटर है, जो अनंत अंतरिक्ष में फैला होकर अनंत अंतरिक्षरूप ही है। इसी तरह जैसे हरेक जीव एक अलग अनंत अंतरिक्षरूप है, अपनी किस्म का। जैसे आदमी का हरेक क्रियाकलाप उसके सूक्ष्मशरीर में दर्ज हो जाता है, और उसीके अनुसार वह उसीके जैसा बारबार बनाता रहता है, उसी तरह हरेक **मूलकण** का हरेक क्रियाकलाप उसके डार्क मेटर में दर्ज होता रहता है। **प्रलय** के बाद जब पुनः **सृष्टि** प्रारम्भ होने का समय आता है, तब उस डार्क मेटर से पुनः वह मूलकण बन जाता है, और उसमें दर्ज सूचनाओं के अनुसार आगे से आगे सृष्टि निर्माण करने लगता है। इसी तरह से सभी मूलकणों के सहयोग से सृष्टि पुनः निर्मित हो जाती है। शास्त्रों में इसे ऐसे कहा है कि पहले **ब्रह्मा** की उत्पत्ति हुई, उनसे **प्रजापतियों** की उत्पत्ति हुई आदि-आदि। मतलब शास्त्रों में भी मूलकणों को मनुष्यों का रूप दिया गया है, क्योंकि दोनों के स्वभाव एकजैसे हैं। लगता है कि **भौतिक विज्ञान** सूक्ष्मशरीर को अलग तरीके से समझ रहा है। इसके अनुसार एन्टेंगलड क्वांटम पार्टिकल्स की **तरंग** आपस में जुड़ी होती है। वह अनंत अंतरिक्ष की दूरी तक भी आपस में जुड़ी ही रहती है।

फिर कहते हैं कि दो मूलकणों को एन्टेगल किया जा सकता है, अगर उन्हें एकदूसरे के काफी नजदीक कर दिया जाए। सम्भवतः इससे उनके डार्क मेटर आपस में एकदूसरे तक पहुंच बना लेते हैं। यह ऐसे ही है, जैसे दो नजदीकी प्रेमियों के सूक्ष्मशरीर एकदूसरे तक पहुंच बना लेते हैं, जैसा ऊपर बताया गया है।

उपरोक्त विवरण से कुछ वैज्ञानिकों और **शास्त्रों** का यह दावा भी सिद्ध हो जाता है कि **भूत, भविष्य और वर्तमान** सब आपस में जुड़े हैं, मतलब **समय** का अस्तित्व नहीं है। जो आज हो रहा है, और जो आगे होगा, वैसा ही पहले भी हुआ था, कुछ अलग नहीँ। सबकुछ पूर्वनिर्धारित है। हालांकि आदमी के **कर्म** और प्रयास का महत्त्व भी है।

अध्याय-6

कुंडलिनी ही दृश्यात्मक सृष्टि, सहस्रार में एनर्जी कँटीन्यूवम ही ईश्वर, और मूलाधार में सुषुप्त कुंडलिनी ही डार्क एनर्जी के रूप में हैं

विश्व की उत्पत्ति प्राण-मनस अर्थात टाइम-स्पेस के मिश्रण से होती है

हठ प्रदीपिका के व्याख्याकार कहते हैं कि सृष्टि की उत्पत्ति मनस शक्ति और प्राण शक्ति के मिश्रण से हुई। यह मुझे कुछ दार्शनिक जुगाली भी लगती है। भौतिक रूप में भी शायद यही हो, पर आध्यात्मिक रूप में तो ऐसा ही होता है। जब मस्तिष्क में प्राण शक्ति पहुंचती है, तब उसमें मनस शक्ति खुद ही मिश्रित हो जाती है, जिससे हमें जगत का अनुभव होता है। "यतपिण्डे तत्ब्रह्मांडे" के अनुसार बाहर भी तो यही हो रहा है। शून्य अंतरिक्ष के अंधेरे में सोई हुई शक्ति में किसी अज्ञात कारण से हलचल होती है। उसमें खुद ही मनस शक्ति मिश्रित हो जाती है, क्योंकि चेतनामयी ईश्वरीय मनस शक्ति हर जगह विद्‌यमान है। इससे मूलभूत कणों का निर्माण होता है। सम्भवतः ये मूल कण ही प्रजापति हैं, जो आगे से आगे बढ़ते हुए पूरी सृष्टि का निर्माण कर देते हैं। यह ऐसे ही है, जैसे मूलाधार के अंधेरे में सोई प्राण ऊर्जा के जागने से होता है। तभी कहते हैं कि यह सृष्टि मैथुनी है। फिर मनस शक्ति को देश या स्पेस और प्राण शक्ति को काल या टाइम बताते हैं। फिर कहते हैं कि टाइम और स्पेस के आपस में मिलने से मूल कणों की उत्पत्ति हो रही है, जैसा वैज्ञानिक भी कुछ हद तक मानते हैं।

डार्क एनर्जी ही सुषुप्त ऊर्जा है

दोस्तो, खाली स्पेस भी खाली नहीं होता, पर रहस्यमयी डार्क एनर्जी से भरा होता है। पर इसे किसी भी यन्त्र से नहीं पकड़ा जा सकता। यही सबसे बड़ी एनर्जी है। हम केवल इसे अपने अंदर महसूस ही कर सकते हैं। ब्रह्मांड इसमें बुलबुलों की तरह बनते और मिटते रहते हैं। सम्भवतः यही तो ईश्वर है। यह शून्य हमें इसलिए लगता है, क्योंकि हमें अनुभव नहीं होता। इसी तरह मूलाधार में सोई हुई ऊर्जा भी डार्क एनर्जी ही है। हम इसे अपनी शून्य आत्मा के रूप में महसूस करते हैं। हम हर समय अनन्त ऊर्जा से भरे हुए हैं, पर भ्रम से उसका प्रकाश महसूस नहीं कर पाते। उसे मूलाधार में इसलिए मानते हैं, क्योंकि मूलाधार मस्तिष्क से सबसे ज्यादा दूर है। मस्तिष्क के सहस्रार क्षेत्र में अगर चेतनता का महान प्रकाश रहता है, तो मूलाधार में अचेतनता का घुप्प अंधेरा ही माना जाएगा। मस्तिष्क से नीचे जाते समय चेतना का स्तर गिरता जाता है, जो मूलाधार पर न्यूनतम हो जाता है। यदि ऐसे समय कुंडलिनी का ध्यान करने की कोशिश की जाए, जब मस्तिष्क थका हो या तमोगुण रूपी अंधेरे से भरा हो, तो कुंडलिनी चित्र नीचे के चक्रों में बनता है। मुझे जो दस सेकंड का क्षणिक आत्मज्ञान का अनुभव हुआ था, उसमें रहस्यात्मक कुछ भी नहीं है। यह शुद्ध वैज्ञानिक ही है। संस्कृत की भाषा शैली ही ऐसी है कि उसमें सबकुछ आध्यात्मिक ही लगता है। उसे विज्ञान की भाषा मेंआप “एक्सपेरिएंस ऑफ डार्क एनेर्जी” या “अदृश्य ऊर्जा दर्शन” कह सकते हैं। इसी तरह सुषुम्ना में ऊपर चढ़ने वाली ऊर्जा भी डार्क एनेर्जी की तरह ही होती है। इसीलिए उसे केवल बहुत कम लोग ही और बहुत कम मौकों पर ही अनुभव कर पाते हैं, सब नहीं। हालाँकि यह पूरी तरह से डार्क एनेर्जी तो नहीं है, क्योंकि यह सूक्ष्म तरंगों या सूक्ष्म अणुओं की क्रियाशीलता से बनी होती है। असली डार्क एनेर्जी में तो शून्य के इलावा कुछ नहीं होता, फिर भी उसमें अनगिनत ब्रह्मांडों का प्रकाश समाया होता है। एकबार कैसे मैंने अपनी दादी अम्मा की परलोकगत आत्मा या डार्क एनेर्जी को ड्रीम विजिटेशन में महसूस किया था। ऐसा लग रहा था कि जैसे

कोई चमकीले कज्जल से भरा आसमान हो, जिसका प्रकाश किसीने बलपूर्वक ढका हो, और वह प्रकाश सभी पर्दे-दीवारें तोड़कर बाहर उमड़ना चाह रहा हो, यानि कि अभिव्यक्त होना चाह रहा हो।

यिन-यांग या प्रकृति-पुरुष से सृष्टि की उत्पत्ति

डार्क एनेर्जी में ही सृष्टि के प्रारंभ में सबसे छोटा औऱ सबसे कम देर टिकने वाला कण बना होगा। इसे ही काल या टाइम या विपरीत ध्रुव की उत्पत्ति कह सकते हैं। स्पेस या डार्क एनर्जी दूसरा ध्रुव है, जो पहले से था। टाइम के रूप में निर्मित वह सूक्ष्मतम कण एक महान विस्फोट के साथ स्पेस की तरफ तेजी से आगे बढ़ने लगता है। यही सृष्टि का प्रारंभ करने वाला बिग बैंग या महा विस्फोट है। वह कण तो एक सेकंड के करोड़वें भाग में विस्फोट से नष्ट हो गया, पर उस विस्फोट से पैदा होकर आगे बढ़ने वाली लहर में विभिन्न प्रकार के कण और उनसे विभिन्न पदार्थ बनते गए। आगे चलकर उन कणों की व उनसे बनने वाले पदार्थों की जीवन अवधि में इजाफा होता गया। वैसे भी कहते हैं कि दो विपरीत ध्रुवों के बनने से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुई। इन्हें यिन-यांग कह सकते हैं। यही प्रकृति-पुरुष है। शरीर में भी ऐसा ही है। मूलाधार में डार्क एनेर्जी है, जो कुंडलिनी योग से जागृत हुई। जागृत होने का मतलब है कि कुंडलिनी योग के सिद्धासन में वह मूलाधार चक्र पर पैर की एड़ी के दबाव से बनी संवेदना के रूप में अनुभव की गई। इस संवेदना में ध्यान चित्र मिश्रित होने से यह कुंडलिनी बन गई। इस संवेदना की उत्पत्ति को हम समष्टि के सबसे छोटे मूल कण की उत्पत्ति का शारीरिक रूप भी कह सकते हैं। वह कुंडलिनी एनेर्जी जागृत होने के लिए सहस्रार की तरफ जाने का प्रयास करते हुए मस्तिष्क में रंगबिरंगी सृष्टि की रचना बढ़ाने लगी। मतलब कि दो विपरीत ध्रुव आपस में मिलने का प्रयास करने लगे। शक्ति शिव से जुड़ने के लिए बेताब होने लगी। समष्टि में वह मूल कण बिग बैंग के रूप में आगे बढ़ने लगा और उस डार्क एनेर्जी के छोर को छूने का प्रयास करने लगा, जहाँ से वह आया था। वह मूलकण नौटंकी

करते हुए यह समझने लगा कि वह अधूरा है, और उसने डार्क एनेर्जी को प्राप्त करने के लिए आगे ही आगे बढ़ते जाना है। ऐसा करते हुए उससे सृष्टि की रचना खुद ही आगे बढ़ने लगी। यह ऐसे ही होता है जैसे आदमी का मन या कुंडलिनी उस अदृश्य अंतरिक्षीय ऊर्जा को प्राप्त करने की दौड़ में भरे-पूरे जगत का निर्माण कर लेता है। कुंडलिनी भी तो समग्र मन का सम्पूर्ण प्रतिनिधि ही है। मन कहो या कुंडलिनी कहो, बात एक ही है। बिग बैंग की तरंगों के साथ जो सृष्टि की लहर आगे बढ़ रही है, उसे हम सुषुम्ना नाड़ी में एनर्जी का प्रवाह भी कह सकते हैं। पर उस डार्क एनेर्जी का अंत तो उसे मिलेगा नहीं। इसका मतलब है कि यह सृष्टि अनन्त काल तक फैलती ही रहेगी। पर इसे अब हम शरीर से समझते हैं, क्योंकि लगता है कि विज्ञान इसका जवाब नहीं ढूंढ पाएगा। जब आदमी इस दुनिया में अपनी सभी जिम्मेदारियों को निभाकर अपनी कुंडलिनी को जागृत कर लेता है, तब वह दुनिया से थोड़ा उपरत सा हो जाता है। कुछ समय शांत रहकर वह दुनिया से बिल्कुल लगाव नहीं रखता। वह जैसा है, उसी में खुश रहकर अपनी दुनियादारी को आगे नहीं बढ़ाता। फिर बुढ़ापे आदि से उसका शरीर भी मृत्यु को प्राप्त होकर नष्ट हो जाता है। इसी तरह जब इस सृष्टि का लक्ष्य पूरा हो जाएगा, तब उसके आगे फैलने की रफ्तार मन्द पड़ जाएगी। फिर रुक जाएगी। अंत में सृष्टि की सभी चीजें एकसाथ अपनी-अपनी जगह पर विघटित हो जाएंगी। इसका मतलब है कि बिग बैंग रिवर्स होकर पुनः बिंदु में नहीं समाएगा। सृष्टि का लक्ष्य समय के रूप में निर्धारित होता होगा। निश्चित समय के बाद वह नष्ट हो जाती होगी, जिसे महाप्रलय कहते हैं। क्योंकि सृष्टि के पदार्थों ने आदमी की तरह असली जागृति तो प्राप्त नहीं करनी है, क्योंकि वे तो पहले से ही जागृत हैं। वे तो केवल सुषुप्ति का नाटक सा ही करते हैं। यह भी हो सकता है कि सृष्टि की आयु का निर्धारण समय से न होकर ग्रह-नक्षत्रों की संख्या और गुणवत्ता से होता हो। जब निश्चित संख्या में ग्रह आदि निर्मित हो जाएंगे, और उनमें अधिकांश मनुष्य आदि जीव अपनी इच्छाएं पूरी कर लेंगे, तभी सृष्टि की आयु पूरी होगी। ऐसा भी हो सकता है कि सृष्टि विघटित होने के लिए वापिस आए, बिग बैंग के

शुरुआती बिंदु पर। क्योंकि आदमी का शरीर भी मरने से पहले बहुत कमजोर और दुबला-पतला हो लेता है। विज्ञान के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत से भी ऐसा ही लगता है। जब बिग बैंग के धमाके की ऊर्जा खत्म हो जाएगी, तो गुरुत्वाकर्षण का बल हावी हो जाएगा, जिससे सृष्टि सिकुड़ने लगेगी और सबसे छोटे मूल बिंदु में समाकर फिर से डार्क एनेर्जी में विलीन हो जाएगी। यह संभावना कुंडलिनी योग की दृष्टि से भी सबसे अधिक लगती है। मानसिक सृष्टि का प्रतिनिधित्व करने वाली कुंडलिनी ऊर्जा भी सहस्रार से वापिस मुड़ती है, और फ्रंट चैनल से नीचे उतरती हुई फिर से मूलाधार में पहुंच जाती है। वहाँ से फिर बैक चैनल से ऊपर चढ़ती है। इस तरह से हमारे शरीर में सृष्टि और प्रलय का क्रम लगातार चलता रहता है।

सांख्य दर्शन और वेदांत दर्शन में सृष्टि-प्रलय

सांख्य दर्शन में पुरुष और प्रकृति, दोनों को शाश्वत कहा गया है। पर वेदांत दर्शन में प्रकृति की उत्पत्ति पुरुष से बताई गई है, जैसा मैं भी कह रहा हूँ। यहां पुरुष मूल रूप में प्रकाशमान डार्क एनेर्जी है, और प्रकृति प्रकाश से रहित डार्क एनेर्जी है। मुझे लगता है कि सांख्य में शरीर के अंदर की सृष्टि और प्रलय का वर्णन हो रहा है। हमें अपने मन में ही डार्क एनेर्जी का अंधेरा हमेशा महसूस होता है, यहाँ तक कि कुंडलिनी जागरण के बाद भी। इसीलिए इसे भी शाश्वत कहा गया है। दूसरी ओर वेदांत में बाहर के संसार की सृष्टि और प्रलय की बात हो रही है। वहां तो प्रकृति या डार्क एनेर्जी और उससे पैदा होने वाले कणों का अस्तित्व ही नहीं है। ये तो केवल हमें अपने मन में महसूस होते हैं। वहाँ अगर इनकी उत्पत्ति होती है, तो सिर्फ नाटकीय या आभासिक ही। वहाँ तो सिर्फ प्रकाश से भरा हुआ एनेर्जी कँटीन्यूवम ही है। वैसे तो वेदांत भी मानसिक सृष्टि का ही वर्णन करता है, क्योंकि वे भी किसी भौतिक प्रयोगशाला का उपयोग नहीं करते, जो बाहर के जगत की उत्पत्ति को सिद्ध कर सके। पर वह उन महान योगियों के अनुभव को प्रमाण मानता है, जो हमेशा एनेर्जी कँटीन्यूवम से जुड़े रहते हैं।

अध्याय-7

कुण्डलिनी योग से मनोमय कोष रूपी पतंग प्राणमय कोष और अन्नमय कोष रूपी माँझे और चकरी से जुड़कर विज्ञानमय कोष रूपी उड़ान भरकर आनंदमय कोष रूपी मजा देती है

होता क्या है कि जब **योग** करते समय **अन्नमय शरीर** और **प्राणमय शरीर** के क्रियाशील होते ही मनोमय शरीर क्रियाशील होता रहता है, तब यह विश्वास पक्का होता रहता है कि **मनोमय शरीर** बेशक बाहरी और अनंत अंतरिक्ष में फैला महसूस होए, पर वह हमारे शरीर से जुड़ा हमारा ही स्वरूप है। हालांकि दुनियादारी के सभी कामों, खेलों, व व्यायामों के दौरान भी अन्नमय कोष, प्राणमय कोष और मनोमय कोष एकसाथ सक्रिय हो जाते है, पर वे इतनी तेजी से सक्रिय होते हैं कि उनकी आपस में **एकत्व भावना** करने का मौका ही नहीं मिलता। साथ में आदमी का ध्यान काम की पेचीदगी, उससे जुड़ी तकनीक, उससे जुड़े फल पर और अन्य लौकिक दुनियादारी पर भी रहता है, जिससे भी एकत्व की भावना की तरफ **ध्यान** नहीं जाता। वैसे भी एकत्व की भावना द्वैत से भरी दुनियादारी की विरोधी है। दो विरोधी चीजें साथ नहीं रह सकतीं। जल और अग्नि साथ नहीं रह सकते। मनोमय शरीर के प्रति इसी आत्मभावना से **विज्ञानमय शरीर** भी क्रियाशील हो जाता है। दुनियादारी का हर किस्म का ज्ञान साधारण ज्ञान की श्रेणी में आता है। किसी को डॉक्टरी का ज्ञान है, किसी को दर्जी

का, किसी को नाई का, किसी को अध्यापन का, किसी को उपदेश देने का, किसी को **यज्ञ या कर्मकांड** करने या अन्य धार्मिक परम्परा निभाने का है। सब साधारण ज्ञान में आते हैं क्योंकि सभी **रोजीरोटी** के लिए और लौकिक व्यवहार के लिए हैं। विशेष ज्ञान या विज्ञान इन सबसे हटकर व अकेला है, जो न तो **जीविकोपार्जन** के लिए है, और न ही लौकिक व्यवहार की सिद्धि के लिए है, बल्कि केवल **आत्मा** की पूर्ण व प्रत्यक्ष अनुभूति के लिए है। विज्ञानमय शरीर का मतलब ही विशेष ज्ञान वाला शरीर है। इसमें स्थित होने पर साधक को ऐसा महसूस होता है कि वह **स्थूल शरीर, प्राण, और मन का मिलाजुला रूप माने संघातमात्र** है। जैसा मैंने पतंग के उदाहरण से स्पष्ट किया था। अगर भटकते मन को अपना आत्मरूप न भी समझ सको तो यह तो समझ ही सकते हैं कि वह शरीर से साँस के माध्यम से ऐसे ही जुड़ा है जैसे एक पतंग मांझे के माध्यम से गट्टू या चकरी से जुड़ी होती है। पतंग उड़ाने का बहुत मजा आएगा। कभी बादलों के ऊपर, कभी दूर देश, कभी दूर ग्रह या तारे पर, कभी दूसरे ब्रह्माण्ड में, कभी परलोक में, तो कभी बिल्कुल पास में या चकरी में लिपटी हुई, कभी आँखों से ओझल होगी और सिर्फ चकरी और धागा ही नजर आएगा, फिर एकदम कहीं प्रकट हो जाएगी, कभी तूफ़ान में जैसी फँसी हुई बेढंगी उड़ेगी और बेढंगी दिखेगी, इस तरह **अनंत आकाश** में वह हर जगह उड़ेगी, पर हमेशा जुड़ी रहेगी शरीर के चक्रों के साथ। शायद चकरी से ही **चक्र** नाम पड़ा हो। हाहा। अब **मनोवैज्ञानिक** भी कह रहे हैं कि सूक्ष्मशरीर स्थूलशरीर के साथ एक **चांदी के धागे** से जुड़ा होता है। यह धागा नाभि से जुड़ा होता है। जैसे मांझा चकरी से बँधा होता है, वैसे ही योगा सांस नाभि से ही चलती है। सीधी सी बात है, अनुभव रूपी पतंग हमेशा अपने से अर्थात आत्मा से अर्थात अपने शरीर से जुड़ी हुई है। सम्भवतः इसीलिए **नाभि चक्र** को आदमी के शरीर का केंद्र बिंदु कहते हैं। नाभि पर एक अंदर की तरफ भिंचाव सा महसूस भी होता है, जब सूक्ष्म शरीर के साथ स्थूल शरीर का ध्यान भी किया जाता है। सम्भवतः नाभि चक्र से ही पतंग की चकरी का नाम पड़ा हो। उससे भौतिक दुनिया का प्रकाश आत्मा को मिलेगा ही, क्योंकि आत्मभावना जुड़ी है सबके साथ। फिर

पूर्वोक्तानुसार **आनंद** भी पैदा होगा ही और कुण्डलिनी भी अभिव्यक्त होगी ही, क्योंकि कुण्डलिनी चित्र ही ऐसी भौतिक वस्तु है, जो ध्यान के माध्यम से आत्मा से सबसे ज्यादा जुड़ी होती है। मतलब कुण्डलिनी आत्मा से भौतिक दुनिया के जुड़ाव की प्रतिनिधि है। विशेष ज्ञान या विज्ञान के विपरीत साधारण ज्ञान दुनियादारी के मामले में होता है। ज्ञान जल्दी ही अज्ञान में परिवर्तित हो जाता है अगर उसे विज्ञान का साथ प्राप्त न हो। यह साइंस वाला विज्ञान नहीं है। प्राणमय शरीर का मतलब साँस पर ही ध्यान नहीं है, पर साँस से उत्पन्न शरीर की गति और शरीर के अन्य हिलने-डुलने पर ध्यान भी है। इस मामले में पैदल चलना एक सर्वोत्तम **अध्यात्मवैज्ञानिक** व्यायाम लगता है। इसमें पूरे शरीर पर, उसकी गति पर, उसकी संवेदनाओं पर और सांसों पर अच्छे से ध्यान जाता है। साथ में मन में भी सात्विकता के साथ विचारों की क्रियाशीलता भी काफी अच्छी होती है।

अध्याय-8

कुंडलिनी योग ही हमें या एलियंस को लंबी दूरी की इंटरस्टेलर यात्रा की तकनीक दिखा रहा है

दोस्तों, **अन्नमय कोष** को खोलने के लिए शरीर का **ध्यान** बहुत जरूरी है। ध्यान से पहले **ज्ञान** का होना जरूरी है। इसीलिए शास्त्रों में शरीर के ब्रह्माण्ड के रूप में वर्णन की बहुतायत है। साथ में, **ब्रह्माण्ड** का अध्यात्मिक रूप में वर्णन ज्यादा है, शरीर का कम। क्योंकि सम्भवतः उस समय शरीर की सूक्ष्मता को जाँचने वाली कोई व्यावहारिक वैज्ञानिक तकनीक नहीं थी, इसलिए यही तरीका बचता था। **शरीरविज्ञान दर्शन** में आधुनिक विज्ञान और पुरातन अध्यात्म ज्ञान को मिश्रित किया गया है, जिससे इससे शरीर का उत्कृष्ट तरीके से ज्ञान हो जाता है। सम्भवतः इसीलिए पुस्तक शरीरविज्ञान दर्शन प्रशंसा की पात्र बनी है। इसे विज्ञान से अध्यात्म में प्रवेशद्वार कह सकते हैं। आजकल अधिकांश लोग भौतिक विज्ञान को ही विज्ञान मानते हैं, अध्यात्म विज्ञान को नहीं। **अध्यात्म विज्ञान से ही टेलीपोर्टेशन संभव हो सकता है।** हो सकता है कि अध्यात्म विज्ञान इतना उन्नत हो जाए कि इस धरती का आदमी सूक्ष्मशरीर बन कर पूरे ब्रह्माण्ड की सैर पर निकल जाए, और कहीं किसी **ग्रह** पर किसी जीव के शरीर में कुछ दिन निवास करके वापिस धरती पर आ जाए। यह भी हो सकता है कि अपने बराबर उन्नत प्राणी के साथ मिलकर आपस में सूक्ष्मशरीरों को कुछ समय के लिए एक्सचेंज करें और एकदूसरे के ग्रहों पर कुछ जीवन बिता कर अपने-अपने ग्रह वापिस लौट जाएं। **सूक्ष्मशरीर** के माध्यम से ही अनंत ब्रह्माण्ड को लंघा जा सकता है, स्थूल शरीर से नहीं। पुराने समय में योगी लोग ऐसी यात्राएं करते भी थे। **कुल मिलाकर आत्मज्ञान होने पर आदमी हर समय हर जगह**

स्थित हो जाता है, जो सर्वोच्च स्तर की अंतरिक्ष यात्रा ही तो है। यही **टाइम ट्रेवल** और **स्पेस ट्रेवल** का सबसे आसान और सही तरीका लगता है मुझे, बेशक जो चाहे वह भौतिक शरीर के साथ भी प्रयास कर सकता है। हो सकता है कि **एलियन्स** को उनसे ही धरती का पता चला है, जिसके बाद वे **यूएफओ** से भी यहाँ आने लग गए हों। **क्रायोस्लीप, लाइट सेल, वर्महोल और वार्प ड्राइव** संभावित समाधान प्रदान करते हैं। दुर्भाग्य से, ये केवल दिवास्वप्न हो सकते हैं, जिसका अर्थ होगा कि लंबी दूरी की **इंटरस्टेलर यात्रा** संभव नहीं है। यह मैं नहीं, बहुत से वैज्ञानिक कह रहे हैं। मतलब **तांत्रिक कुण्डलिनी योग व कर्मसिद्धांत** ही धरती से अन्य ग्रह पर पहुंचा सकते हैं। मनोरंजन और उत्साहवर्धन के लिए प्रत्यक्ष व सीधे तौर पर शरीर के टेलीपोर्टेशन की कल्पना भी की जा सकती है। ऐसी ही नाटकीय कल्पना "लॉस्ट इन स्पेस" नामक वेबसेरीस में की गई है। मैंने हाल ही में यह देखी। मुझे अच्छी और बाँधने वाली लगी। मैं किसीका प्रचार नहीं कर रहा, बल्कि दिल की बात बता रहा हूँ। सच्ची बात कह देनी चाहिए, उसमें अगर किसी का प्रचार होता हो तो होता रहे, हमें क्या।

कुछ बिमारियां आदमी का महामानव बनने का प्रयास लगती हैं

वैज्ञानिक तो यह दावा भी कर रहे हैं कि आदमी में जो आनुवंशिक बिमारियां हो रही हैं, वे एलियन के डीएनए की वजह से हो रही है। कभी एलियन यहाँ की औरतों को उठाकर ले गए थे और उन्हें गर्भवती करके वापिस भेज दिया था या वहाँ उनसे संतान पैदा की थी। फिर वो **डीएनए** सबमें फैल गया। यह आदमी को **महामानव** बनाने के लिए हुआ। मुझे अपना **एंकोलाईसिंग स्पोंडीलोआर्थराईटिस** वैसी ही फॉरेन बिमारी लगती है। यह बिमारी मुझे योग करने के लिए मजबूर करती है। इससे वैज्ञानिकों का दावा कुछ सिद्ध भी हो जाता है। मुझे तो लगता है कि प्रॉस्टेट और बवासीर भी ऐसी ही आनुवंशिक बीमारियां हैं। ये भी आदमी को योगी जैसा बनाती हैं। पुराने लोगों ने इसे

ऐसे समझा होगा कि कष्ट झेलने से योग सफल होता है, इसीसे **तप** शब्द का प्रचलन बढ़ा होगा। आजकल कैंसर भी बढ़ रहा है। यह भी **आनुवंशीकी** से जुड़ा रोग होता है। हो सकता है कि यह प्रकृति के मानव को महामानव बनाने के प्रयास के दौरान पैदा हुआ डिफेक्ट हो। वैसे भी बहुत से महान योगियों को कैंसर विशेषकर गले का कैंसर हुआ है। क्वांटम और स्पेस के बारे में लिखने का दूसरा उद्देश्य था कि वैज्ञानिकों की कुछ मदद हो जाए, क्योंकि वे इन क्षेत्रों में कुछ पजल्ड और फ़्रस्टेटिड दिखाई देते हैं। अब पुनः अध्यात्म विज्ञान की तरफ लौटते हैं, क्योंकि जो मजा इसमें है, वह और कहीं नहीं है। **भौतिकता से प्यास बढ़ती है, तो अध्यात्म से प्यास बुझती है। दोनों का अपना महत्त्व है। गीता** में भी **श्रीकृष्ण** स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि "**अध्यात्मविद्या विद्यानाम्**"। मतलब विद्याओं में मैं अध्यात्मविद्या हूँ। मतलब उन्होंने अध्यात्मविद्या को सभी विद्याओं में श्रेष्ठ माना है। फिर भी जैसे-जैसे भौतिक विज्ञान की पहेलियाँ सुलझती रहेंगी, हम बीचबीच में उनका भी उल्लेख करते रहा करेंगे।

कुंडलिनी शक्ति ही अंधेरे से संपूर्ण सृष्टि की रचना करती है

गुप्त कालचक्र मुझे अवचेतन मन का खेल लगता है। आदमी के हरेक अंग से संबंधित सूचना उससे संबंधित चक्र में छुपी होती है। ये पिछले अनगिनत जन्मों की सूचनाएं होती हैं, क्योंकि सभी जीवों के शरीर, उनके क्रियाकलाप, उनसे जुड़ी भावनाएं और चक्र सभी लगभग एकजैसे ही होते हैं, मात्रा में कम ज्यादा का या रूपाकार का अंतर हो सकता है। चक्रों पर ध्यान करने से वे सूचनाएं प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में प्रकट होकर मिटती रहती हैं। जब स्थूल मन की सफाई हो जाती है, तब आदमी सूक्ष्म मन की सफाई के लिए खुद ही चक्रसाधना की ओर मुड़ता है। जैसे स्थूल मन की अवस्था समय के साथ प्रतिपल बदलती रहती है, वैसे ही सूक्ष्म अवचेतन मन की भी बदलती रहती है, क्योंकि सूक्ष्म मन भी स्थूल मन का ही प्रतिबिंब है, पर वह हमें नजर नहीं आता। इसीलिए इसे गुप्त कालचक्र कहते हैं। मतलब कि अगर अवचेतन मन पूरा साफ भी कर लिया तो इसकी कोई गारंटी नहीं कि यह फिर गंदा नहीं होगा। सभी चक्रों का ऊर्जा स्तर बदलता महसूस होता रहेगा चक्रसाधक को। काल के थपेड़ों से कुछ नहीं बच सकता। इसलिए भलाई इसी में है कि जो है, उसे स्वीकार करते रहो हर स्थिति में बराबर और अप्रभावित से बने रहते हुए। यही वैकल्पिक कालचक्र है। यही गुप्तकालचक्र साधना का मुख्य उद्देश्य लगता है मुझे।

कुंडलिनी शक्ति सृष्टि का निर्माण करती है, जो यह कहा जाता है इसका यह अर्थ नहीं लगता कि वह अंतरिक्ष के ग्रह तारों आदि भौतिक और स्थूल पिंडों का निर्माण करती है। बल्कि ज्यादा युक्तियुक्त तो यह अर्थ लगता है कि वह प्रजनक संभोगशक्ति के जैसी है जो एक बच्चे को जन्म देती है और उसके शरीर और मनमस्तिष्क के रूप में संपूर्ण सृष्टि का निर्माण करती है। हालांकि पहले वाली उक्ति भी अप्रत्यक्ष रूप से सही हो सकती है, क्योंकि जो पिंड में है वही ब्रह्मांड में है, पर दूसरी उक्ति तो प्रत्यक्ष, व्यवहारिक व स्पष्ट रूप से सत्य दिखती है।

कई लोग बोल सकते हैं कि संभोग शक्ति तो वंश परंपरा को बढ़ाने के लिए है, उसमें कुंडलिनी कहां से आ गई। आदमी तो कुछ भी मायने निकाल सकता है उस शक्ति के। अगर उसका असली उद्देश्य जानना हो तो पशु को देखना चाहिए। ये अपनी सोच या लक्ष्य के हिसाब से नहीं बल्कि कुदरती प्रेरणा या इंस्टिंक्ट अर्थात स्वाभाविक प्रवृत्ति से ज्यादा चलते हैं। उनके मन में संतानोत्पत्ति का उद्देश्य नहीं होता संभोग को लेकर। वे तो अज्ञान के अंधेरे में संकुचित मन को विस्तार देने के लिए ही संभोग के लिए प्रेरित होते हैं, वह भी तब जब प्राकृतिक अनुकूल परिस्थितियां उन्हें इसके लिए प्रेरित करे, ऐसे तो इसके लिए भी अपनेआप उनमें लालसा पैदा नहीं होती। एक भैंस और भैंसा तभी इसके लिए प्रेरित होंगे जब भैंस मद में अर्थात हीट में होगी जो महीने में एक या दो दिन के लिए आती है। गर्मियों के मौसम में तो वह हीट आना भी बंद हो जाता है। अन्य समय तो दोनों साथ में रहते हुए भी संभोग नहीं करेंगे। आदमी विकसित प्राणी है। वह कुदरती नियमों से लाभ लेना जानता है। तंत्रयोगी एक कदम और आगे है। वह अंधेरे में संकुचित मन की एक ध्यानचित्र के रूप में छोटी सी लौ जलाता है। फिर वह उसे संभोगसहायित योग से इतना ज्यादा बढ़ाता है कि वह जागृत हो जाती है। यही कुंडलिनी जागरण है। अब चाहे ध्यानचित्र के रूप में संकुचित मन को कुंडलिनी कहो या अंधेरे में संकुचित मन को। बात एक ही है क्योंकि वही अंधेरा ध्यानसाधना से विकसित होकर ध्यानचित्र बन जाता है। जो संभोग शक्ति उसे विकसित होने का बल देती है, वह मूलाधार मतलब अंधेरे कुंड में रहती है, इसीलिए इसका नाम कुंडलिनी है। मतलब ध्यानचित्र का कुंडलिनी नाम तभी पड़ा जब उसे संभोग शक्ति अर्थात वीर्यशक्ति का बल मिला। मतलब कुंडलिनी शब्द ही तांत्रिक है। आम आदमी अंधेरे में या अनगिनत क्षुद्र और हल्के विचारों में संकुचित मन के साथ सीधे ही संभोग करता है, जिससे अनगिनत विचारों में वह शक्ति बंट जाती है। इससे उसे दुनियावी विस्तार या तरक्की तो मिल सकती है, पर जागृति के लाभ कम ही मिलते हैं।

जब शक्ति मूलाधाररूपी कुंड के अंधेरे में घुसती है, तभी जीव संभोग की ओर आकृष्ट होता है। हमेशा पूर्ण ज्ञान के प्रकाश में रहने वाले व्यक्ति का तो संभोग का मन ही नहीं करता। मेरे एक खानेपीने वाले एक वरिष्ठ अनुभवी मित्र थे जिन्होंने मुझे एकबार कहा था कि अगर मैं मांसाहार नहीं करूंगा तो संभोग कैसे कर पाऊंगा। मैं उस बात को मन से नहीं मान पाया था। आज मैं उनकी बात में छिपे तंत्र दर्शन को समझ पा रहा हूं। अंधेरा सिर्फ़ खानेपीने से ही पैदा नहीं होता। दुनियादारी में आसक्ति से कर्मशील रहते हुए भी पैदा होता है। मुझे लगता है कि शरीर की बनावट ही ऐसी है कि मस्तिष्क या मन का अंधेरा जैसे जैसे बढ़ता है, वैसे वैसे ही शक्ति नीचे जाती है। सबसे ज्यादा या घुप्प अंधेरे का मतलब है कि शक्ति मूलाधार पर इकट्ठी हो गई है। यह रक्तसंचार ही है जो कुदरतन नीचे की ओर इकट्ठा होता रहता है। मूलाधार तक पहुंचकर शक्ति फिर पीठ से होकर सीधी मस्तिष्क को चढ़ जाती है। मूलाधार पर शक्ति के पहुंचने से स्वाभाविक है कि वहां के यौनांग क्रियाशील हो जाएंगे। कई संयम रखकर उस शक्ति को वापिस ऊपर जाने का मौका देते हैं। कई तांत्रिक विधि से उसे बढ़ा कर फिर बढ़ी हुई मात्रा को ऊपर चढ़ाते हैं, और कई गिरा देते हैं। शक्ति के गिरने से मूलाधार में शक्ति फिर इकट्ठी होने लगती है जिसमें पहले से ज्यादा समय लग जाता है। अच्छी खुराक से वह जल्दी इकट्ठी होती है पर उसमें पापकर्म भी शामिल हो सकता है। साथ में, भोजन को पचाने और उसे शरीर में लगाने में भी ऊर्जा खर्च होती है, मतलब कुल मिलाकर प्राण ऊर्जा की हानि ही होती है। फिर ऐसे ही होगा कि आगे दौड़ और पीछे चौड़। इन साधारण लोकोक्तियों के बड़े गहन अर्थ होते हैं। चौड़ मतलब कुंडलिनी सर्पिणी का कुंडल। मतलब शक्ति पाप के अंधेरे के रूप में सो जाती है, बेशक उसे उस अंधेरे की शक्ति से ही ऊपर चढ़ाया गया हो। पर मुझे लगता है कि उतना पाप खाने पीने से नहीं लगता जितना दुनिया में आसक्तिपूर्ण व्यवहार से लगता है। इसीलिए तो शिव भूतों की तरह खाने पीने वाले दिखते हुए भी मस्तमलंग, निस्संग और निष्पाप बने हुए विचरते रहते हैं। पर जब आदमी का मन या आत्मा इतना साफ हो जाएगा कि उसमें अंधेरा होगा ही नहीं बेशक शक्ति मूलाधार को गई

हुई हो, तब क्या होगा। शायद तब बिना संभोग के उसकी शक्ति ऐसे ही घूमती रहेगी। उसे यौनोन्माद भी होगा, इरेक्शन भी होगा, पर वह भौतिक संभोग के प्रति ज्यादा प्रेरित नहीं होगा, क्योंकि उसे महसूस होगा कि उससे शक्ति की हानि है, बेशक कितनी ही सावधानी क्यों न बरती जाए। मुलाधार में शक्ति के समय उसके मन में किसी कामुक स्त्री का चित्र छा सकता है, और सहस्रार में शक्ति के समय किसी गुरु या आध्यात्मिक व्यक्ति या प्रेमी पुरुष का। पर वह दोनों से ही अनासक्त रहते हुए अपने काम में व्यस्त रहेगा, जिससे वह शक्ति उसमें झूलती रहेगी और वह हमेशा आनंद में डूबा रहेगा।

जब ऊर्जा मूलाधार को जाएगी तो मास्तिष्क में तो उसकी कमी पड़ेगी ही जैसे जब बारिश का पानी जमीन में रिसेगा, तो पानी से भरे गढ्ढे सूखेंगे ही। इससे मन में कुछ न कुछ अंधेरा तो छाएगा ही, बेशक आदमी कितना ही ज्यादा शुद्ध और सिद्ध क्यों न बन गया हो। विकारशील दुनिया में इतना सिद्ध कोई नहीं हो सकता जिसका मन मस्तिष्क हमेशा उजाले से भरा रहता हो। आम सांसारिक आदमी के मन का उजाला तो ऊर्जा के सहारे ही है। बिना भौतिक ऊर्जा के उजाला रखने वाला तो कोई अति विरला साधु संन्यासी ही हो सकता है। फिर भी पूरा उजाला तो पूर्ण मुक्ति की अवस्था में में ही होना संभव है, जो शरीर के रहते संभव नहीं है। विकारी शरीर के साथ जुड़े होने पर कोई पूरी तरह कैसे निर्विकार रह सकता है। बैलगाड़ी में बैठने वाला हिचकोलों से कैसे बच सकता है। जो बिना संभोग के ही मन में उजाला बना कर रखते हैं, उन्होंने संभोग से इतर सात्त्विक तकनीकों में महारत हासिल कर ली होती है, जिनसे मूलाधार की ऊर्जा पीठ से ऊपर चढ़ती रहती है। यह सांसों पर ध्यान, शरीर पर ध्यान, वर्तमान पर ध्यान, चक्रों पर साधारण या बीजमंत्रो के साथ ध्यान, विपश्यना, देवपुजा आदि ही हैं। उदाहरण के लिए चक्रों पर बीजमंत्रों के ध्यान से प्राण खुलते हैं, सांसें खुलती हैं, चेतना और उससे मन विचारों की चमक बढ़ती है, बुद्धि बढ़ती है, और मूलाधार पर ऊपर की तरफ संकुचन बल लगता है। चमक चाहे शरीर के भीतर हो या बाहर, ऊर्जा से ही आती है।

मानसिक अंधेरा भी दो किस्म का होता है। एक खाने पीने, शारीरिक श्रम, नींद, आराम आदि से उत्पन्न अंधेरा होता है। उसमें शरीर में ऊर्जा तो बहुत होती है, पर मन में उसकी कमी होती है, क्योंकि हिंसा, नशे आदि से और दुनियावी आसक्ति के श्रम के बाद अकेलेपन से मन की चेतना दबी हुई होती है। मतलब साफ़ है कि जब मास्तिष्क में नहीं, तब वह मूलाधार के दायरे में केंद्रित होती है। शरीर के दो ही मुख्य दायरे हैं। एक सहस्रार का तो दूसरा मूलाधार का। ऊर्जा एक दायरे में नहीं तो स्वाभाविक है कि दूसरे दायरे में होगी। अगर सिक्के का हैड नहीं आया तो टेल ही आएगा, अन्य कोई विकल्प नहीं। ऐसी अवस्था में तांत्रिक संभोग से लाभ मिलता है। दूसरी किस्म का अंधेरा वह होता है जिसमें पूरे शरीर में ऊर्जा की कमी होती है। यह तो रोग जैसी या अवसाद जैसी या थकावट जैसी या कमजोरी जैसी अवस्था होती है। इसीलिए इसमें संभोग का मन नहीं करता। अगर करेगा तो बीमार पड़ सकता है, क्योंकि एक तो पहले ही शरीर में ऊर्जा की कमी होती है, दूसरा ऊपर से संभोग में भी ऊर्जा को व्यय कर रहा है। सबको पता है कि घर की छत की टंकी में पानी जीवन के कई काम संपन्न करवाता है। पर पानी को छत तक चढ़ाने के लिए भी ऊर्जा चाहिए और भूमिगत टैंक में भी पानी होना चाहिए। अगर सूखे टैंक में या कम वोल्टेज में पंप चलाएंगे, तो पंप तो खराब होगा ही। वैसे तो तांत्रिक संभोग का भी संत वाला शांत तरीका भी है, जिससे उसमें कम से कम ऊर्जा की खपत होती है, और ज्यादा से ज्यादा ऊर्जा ऊपर चढ़ती है। मस्तिष्क में ऊर्जा होना सबसे ज्यादा जरूरी है, क्योंकि वही पूरे शरीर को नियंत्रित करता है। नीचे के चक्रों में, विशेषकर सबसे नीचे के दो चक्रों में ऊर्जा कुछ कम भी रहे तो भी ज्यादा नुकसान नहीं।

कई लोग बोल सकते हैं कि शून्य अंधेरे से विचाररूपी सृष्टि कैसे बनती है। अंधेरे का मतलब ही सूक्ष्म या अव्यक्त या छुपी हुई सृष्टि है। अंधेरा वास्तव में शून्य नहीं होता जैसा अक्सर माना जाता है। असली शून्य तो बौद्धों का शून्य मतलब परब्रह्म परमात्मा ही होता है। सृष्टि बनने के लिए दो चीजें ही चाहिए, अंधेरा और शक्ति अर्थात ऊर्जा। अगर ऊर्जा नहीं है तो अंधेरा सृष्टि के रूप में व्यक्त नहीं हो पाएगा। जीवात्मा के रूप में जो अंधेरा होता है,

उसी को सृष्टि के रूप में प्रकट करने के लिए ही उसे शरीर मिलता है, जिससे ऊर्जा मिलती है। यह अलग बात है कि वह योगसाधना से उस सृष्टि को शून्य कर पाएगा या उसी अंधेरे में छुपा देगा या उससे भी ज्यादा आसक्तिमय दुनियादारी से अपने को उससे भी ज्यादा अंधेरे में बदल देगा, जिसके लिए उसे फिर से नया जन्म और नया शरीर प्राप्त करना पड़ेगा। नया शरीर कर्मों के अनुसार मिलेगा। अच्छे कर्म हुए तो मनुष्य शरीर फिर मिल जाएगा जिससे सृष्टि को शून्य करने का मौका पुनः मिल जाएगा। अगर कर्म बुरे हुए तो किसी जानवर का शरीर मिलने से अंधेरे का बोझ कुछ कम तो हो जाएगा पर शून्य नहीं हो पाएगा, क्योंकि जानवर योग नहीं कर सकते। इस तरह पता नहीं फिर कब मौका मिलेगा। यही वेदवाणी कहती है।

वैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध कर चुके हैं कि स्थूल भौतिक सृष्टि में भी ऐसा ही होता है। उन्होंने पाया कि अंतरिक्ष में हर जगह वे मूलभूत कण या तरंगें क्वांटम फ्लैकचुएशन के रूप में मौजूद हैं जिनसे सृष्टि का निर्माण होता है। क्योंकि वे बहुत सूक्ष्म और अव्यक्त जैसे हैं इसलिए पकड़ में न आने से अंधेरे के रूप में महसूस होते हैं। उदाहरण के लिए डार्क एनर्जी, डार्क मैटर यह सब अंधेरा ही तो है। जब कहीं से उन्हें ऊर्जा मिलती है तो उनका स्पंदन बढ़ने लगता है जिससे सृष्टि का या स्थूल पदार्थों का निर्माण शुरु हो जाता है। विचारों के लिए तो यह ऊर्जा शरीर से मिलती है पर स्थूल सृष्टि के लिए कहां से मिलती है। इसके बारे में अभी स्पष्टता और एकमतता नहीं दिखती। कुछ कहते हैं कि ब्लैकहोल आदि पिंडों के आपस में टकराने से जो गुरुत्वाकर्षण तरंगें आदि अंतरिक्ष में हलचलें पैदा होती हैं, उसीसे वह ऊर्जा मिलती है। जहां पर अंतरिक्ष में ज्यादा हलचल है, वहां ज्यादा तारों का निर्माण होता पाया गया है। पर सृष्टि की शुरुआत में अंतरिक्ष की सबसे पहली हलचल के लिए ऊर्जा कहां से आई, यह पता नहीं है। शास्त्र तो कहते हैं कि ओम ॐ की आवाज निकली जिससे सृष्टि का निर्माण शुरु हुआ। ओम की ध्वनि एक अंतरिक्ष की तरंग या हलचल ही है। हो सकता है कि उसी ने आगे की हलचलों और निर्माणों का सिलसिला शुरु किया हो। ॐ ध्वनि रूपी हलचल के लिए ऊर्जा कहां से आई, यह प्रश्न अनुत्तरित है। यह शायद

परमात्मा की अपनी अचिंत्य शक्ति है, जिसका उत्तर योग के अतिरिक्त विज्ञान से मिल भी नहीं सकता। अगर शक्ति नहीं होगी तो शिव शव की तरह अंधेरा बना रहेगा, व्यष्टि शरीर के अंदर भी और समष्टि शरीर मतलब स्थूल भौतिक सृष्टि में भी।

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) Love story of a Yogi- what Patanjali says

2) Kundalini demystified- what Premyogi vajra says

3) कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तक 1, 2, 3 and 4)

4) The art of self publishing and website creation

5) स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला

6) कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है

7) बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी

8) ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट

9) My kundalini website on e-reader

10) शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)

11) श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम

12) सोलन की सर्वहित साधना

13) योगोपनिषदों में राजयोग

14) क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव

15) देवभूमि सोलन

16) मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र

17) बघाटेश्वरी माँ शूलिनी

18) म्हारा बघाट

19) भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस

20) Kundalini science~a spiritual psychology (book-1,2, 3 and 4)

21) Blackhole doing yoga- A Matching cosmic Story

22) ब्लैकहोल की योगसाधना - एक मेल खाती ब्रह्मांड-कथा

23) क्वांटम विज्ञान व अंतरिक्ष विज्ञान में योग- विज्ञानांत से योगारम्भ की ओर बढ़ते कदम

24) Quantum Science and Space Science in Yoga- Where science ends there yoga begins

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज "शॉप (लाईब्रेरी)" पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,"https://demystifyingkundalini.com/" को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु